प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

मेला विशेषांक

मार्च 2021

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

संपादकीय

किसान भाइयों को बताते हुए हर्ष हो रहा है कि इस वर्ष का पूसा कृषि विज्ञान मेला फरवरी 25–27, 2021 को आयोजित किया जा रहा है। इस वर्ष कृषि मेले का विषय 'आत्मनिर्भर किसान' रखा है। पिछले मेलों की तुलना में इस वर्ष का मेला थोड़ा सीमित रखा गया है जो कोरोना महामारी को ध्यान में रखते हुए और सुरक्षा संबंधी नियमों का अनुपालन करते हुए आयोजित किया जा रहा है। इसलिए इस बार किसानों की संख्या प्रतिदिन भागीदारी के लिए कम होगी ऐसी आशा है। आप सभी से अनुरोध है कि पूसा मेले में मास्क लगाकर आएं और सामाजिक दूरी का ध्यान रखें।

हर वर्ष देशभर से हजारों किसान भाई बड़ी उत्सुकता से संस्थान द्वारा आयोजित होने वाले किसान मेले की प्रतीक्षा करते हैं क्योंकि पूसा कृषि विज्ञान मेले की एक विशेष प्रतिष्ठा है। इस वर्ष मेले के मुख्य आकर्षक हैंः उन्नत बीजों की बिक्री, उन्नत किस्मों के फसल प्रदर्शन, उन्नत कृषि तकनीकों की जानकारी व उपलब्धता, मिट्टी व पानी की जांच, महत्वपूर्ण विषयों पर संगोष्ठी तथा कृषि संबंधी समस्याओं का वैज्ञानिकों द्वारा समाधान आदि। पूसा मेला भारत भर के किसानों के लिए जिज्ञासा का माध्यम होता है क्योंकि मेले में किसानों को 'नवोन्मेषी किसान पुरस्कार' तथा 'भा.कृ.अनु.स. अध्यता' किसान पुरस्कार दिया जाता है। पूसा संस्थान पिछले 12 वर्षों से लगभग 450 किसानों को पुरस्कृत कर चुका है; जिस से प्रेरित होकर देश भर में अन्य संस्थानों ने भी किसान पुरस्कारों की शुरुआत की है।

इस कार्यक्रम में जहां एक और श्रोता किसानों को लाभ होता है वहीं पुरस्कृत किसानों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रोत्साहन मिलता है।

पूसा कृषि विज्ञान मेले में एक दिलचस्प सत्र नवोन्मेषी किसान सम्मेलन का होता है, जिसमें देश भर से पुरस्कृत किसान अपनी सफलता का राज साझा करते हैं, कि किस तरह उन्होंने अपने सक्षम आने वाली समस्याओं का समाधान करते हुए कृषि को मुनाफे वाले उद्यम में परिवर्तित किया।

हर वर्ष की भांति इस बार भी प्रसार दूत का मेला विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। प्रसार दूत के इस अंक में किसानों के उपयोगी लेख शामिल किए गए हैं। बेबी कॉर्न की खेतीः अधिक आय व पशुपालन व्यवसाय हेतु बेहतर विकल्प, उपोष्ण जलवायु वाले राज्यों में गन्ना खेती के लिए उन्नत सस्य तकनीक, पूसा अरहर 16 की उत्पादन तकनीकी, जैविक कीटनाशकों के प्रयोग द्वारा कृषि रक्षा प्रबन्धन, पॉलीहाउस में सूत्रकृमि रोग : एक गंभीर समस्या, कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती, मृदा उर्वरता बढ़ाने हेतु कम्पोस्ट खाद, गेंदाः उच्च आय हेतु व्यावसायिक फसल, आम के मूल्यवर्धन से बढ़ाएं आमदनी, गुड़ और इसके औषधीय गुण, मूंग : महत्वपूर्ण एवं कम समय में पकने वाली दलहनी फसल, बेलदार सब्जियों की खेती विषयों पर आलेख हैं। यह अंक आपको कैसा लगा, हमें अवश्य सूचित करें।

संपादक

मार्च 2021

प्रसार दूत

वर्ष 26 | 2021 | अंक-1

संरक्षक

डॉ. अशोक कुमार सिंह

निदेशक

डॉ. रश्मि अग्रवाल

कार्यवाहक संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक

डॉ. जे.पी.एस. डबास

सम्पादक

डॉ. एन.वी कुंभारे

सम्पादक मंडल

डॉ. राजीव कुमार सिंह

डॉ. गोगराज सिंह जाट

श्री के. एस. यादव

डॉ. हरीश कुमार

डॉ. वाई. पी. सिंह

श्री आनन्द विजय दुबे

तकनीकी सहयोग

श्री विजय सिंह जाटव

श्री लक्खी राम मीणा

श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली–110012

फोनः 011–25841039

पूसा एग्रीकॉमः 1800118989 (टोल फ्री)

ई–मेंलः incharge_atic@iari.res.in

वेबसाइटः www.iari.res.in

वार्षिक शुल्क ₹ 80/– मनीआर्डर द्वारा

एक प्रति मूल्य ₹ 20/–

विषय सूची | पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

1. बेबी कॉर्न की खेती : अधिक आय व पशुपालन व्यवसाय हेतु बेहतर विकल्प — 01
2. उपोष्ण जलवायु वाले राज्यों में गन्ना खेती के लिए उन्नत सस्य तकनीक — 07
3. पूसा अरहर 16 की उत्पादन तकनीकी — 13
4. जैविक कीटनाशकों के प्रयोग द्वारा कृषि रक्षा प्रबन्धन — 15
5. पॉलीहाउस में सूत्रकृमि रोग : एक गंभीर समस्या — 20
6. कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती — 24
7. मृदा उर्वरता बढ़ाने हेतु कम्पोस्ट खाद — 26
8. गेंदा : उच्च आय हेतु व्यावसायिक फसल — 29
9. आम के मूल्यवर्धन से बढ़ाएं आमदनी — 33
10. गुड़ के औषधीय गुण — 38
11. मूंग : महत्वपूर्ण एवं कम समय में पकने वाली दलहनी फसल — 41
12. बेलदार सब्जियों की खेती — 46

बेबी कॉर्न की खेती : अधिक आय व पशुपालन व्यवसाय हेतु बेहतर विकल्प

शंकर लाल जाट, सी.एम. परिहार[1], भूपेंद्र कुमार एवं अनुप कुमार
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान, दिल्ली इकाई, नई दिल्ली
[1]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

बेबी कॉर्न को शिशु मक्का भी कहते है। यह वह अनिषेचित मक्का का भुट्टा है जो सिल्क की 2–3 से. मी. लम्बाई वाली अवस्था या सिल्क आने के 1 से 3 दिन के अन्दर पौधे से तोड़ लिया जाता है। इसकी खेती से पशुओं के लिए पौष्टिक हरा चारा भी मिल जाता है। बेबी कॉर्न की निश्चित विपणन (माक्रेटिंग) और डिब्बाबंदी (कैनिंग) से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। यह विभिन्न व्यंजनों के रूप में उपयोग में लाया जाता है। कृषि में आय बढाने हेतु बेबी कॉर्न की खेती शहरी क्षत्रों के आस–पास सफलतापूर्वक की जा सकती है। बेबी कॉर्न से उत्तम गुणवत्ता के पौष्टिक चारे एवं साईलेज पशुपालन व्यवसाय में उत्पादकता बढ़ाने की भी अपार सम्भावनायें हैं। इस ऋतु में यह मुख्यतः दाने, हरे भुट्टे व हरे चारे के लिए उगाई जाती है लेकिन शहरों के आस–पास बेबी कॉर्न की खेती बहुतायत से प्रचलित होती जा रही है जो मुख्य उत्पाद के साथ–साथ हरे चारे की भी पूर्ति करती है। यह फसल बसंत ऋतू में लगभग 60–70 दिनों में तैयार हो जाती है। बेबी कॉर्न के साथ बसंत ऋतु में भिन्डी, धनिया आदि सब्जियों की अंत:वर्ती खेती की जा सकती है। हमारे इस लेख में बेबी कॉर्न से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिये उन्नत उत्पादन तकनीकों को संकलित किया गया हैं। इसमें किस्मों के चयन, नवीन जुताई तकनीक जैसे कि शून्य जुताई, खरपतवार नियन्त्रण, पोषण प्रबंधन, कीट एवं बीमारी प्रबंधन पर विशेष जोर दिया हैं।

पौष्टिक महत्व एवं उपयोगः बेबी कॉर्न एक स्वादिष्ट एवं पौष्टिक आहार है तथा पत्तों से लिपटी रहने के कारण कीटनाशक दवाओं के प्रभाव से मुक्त होती है। इसमें फॉस्फोरस की मात्रा भी भरपूर होती है तथा इसके अतिरिक्त इसमें कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, कैल्शियम, लोहा व विटामिन भी उपलब्ध होते हैं। यह आसानी से पचाया जा सकता है।

बेबी कॉर्न को कच्चा या पकाकर भी खाया जा सकता है। इससे अनेक प्रकार के व्यंजन भी तैयार किए जाते हैं जैसे सूप, सलाद, सब्जियाँ, कोफ्ता, पकौड़ा, भुजिया, रायता, खीर, लड्डू, हलवा, अचार, कैन्डी, मुरब्बा, बर्फी, जैम इत्यादि।

बेबी कॉर्न के पोषक तत्व (ड्राई मैटर के आधार पर)

विवरण	बेबी कॉर्न संकर (एचएम – 4)
नमी ग्राम/100 ग्राम	7.37
कच्चा (क्रुड) प्रोटीन (ग्राम/100 ग्राम)	10.04
कच्चा (क्रुड) वसा (ग्राम/100 ग्राम)	4.43
कच्चा (क्रुड) रेशा (ग्राम/100 ग्राम)	2.40
राख (ग्राम/100 ग्राम)	1.34
कुल कार्बोहाइड्रेट्स	81.97
उर्जा (कि.कै./100 ग्राम)	375.67
कुल घुलनशील शक्ररा (कि.कै./100 ग्राम)	0.14
कैल्शियम (मि.ग्रा./100 ग्राम)	17.76
फॉस्फोरस (मि.ग्रा./100 ग्राम)	197.89
लौह (मि.ग्रा./100 ग्राम)	2.73

स्रोत : आशा क्वात्रा एवं सलिल सहगल, 2007.

भूमि का चयन एवं तैयारीः बेबी कॉर्न की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। उचित जल निकासयुक्त बलुई मटियार से दोमट मृदा जिसमें वायु संचार एवं पानी के निकास की उत्तम व्यवस्था हो तथा पी.एच मान 6.5 से 7.5 के बीच हो (अर्थात न अम्लीय हो न ही क्षारीय) उसमें बेबी कॉर्न सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। जिस जमीन में नमकीन पानी की समस्या है वहॉ बेबी कॉर्न की बिजाई मेड़ के उपर के बजाय साइड में लगायें जिससे जड़ें नमक से प्रभावित न हों।

खेत की नमी को बनाये रखने के लिए कम से कम समय में जुताई करके तुरन्त पाटा लगाना लाभदायक रहता है। जुताई का मुख्य उद्देश्य मिट्टी को भुरभुरी बनाना है। अगर किसान भाई नवीनतम जुताई तकनीक जैसे शून्य जुताई (भूपरिष्करण) का उपयोग न कर रहे हों तो कल्टीवेटर एवम् डिस्क हैरो से लगातार जुताई करके खेत को अच्छी तरह से तैयार कर लें। अगर संभव हो तो संसाधन प्रबंधन तकनीक का ही इस्तेमाल करें। भूमि की तैयारी मुख्य रूप से खेत में ली गई पूर्व फसल पर निर्भर करती है। यदि आलू की खुदाई के बाद बेबी कॉर्न की बुवाई की जा रही है तो सीधे पाटा लगाकर बुवाई की जा सकती है। यदि खेत में खरपतवार नहीं है तो शून्य जुताई तकनीक द्वारा भी बेबी कॉर्न की बुवाई की जा सकती है।

बुवाई का समय एवं बीज दरः जायद में बेबी कॉर्न की बुवाई के लिए फरवरी–मार्च के महीने उपयुक्त है लेकिन जिन प्रदेशों में तापमान जल्दी बढ़ता है वहां जनवरी के अंत में भी बुवाई की जा सकती है। जायद ऋतु में बेबी कॉर्न की बुवाई का उपयुक्त समय फरवरी का प्रथम सप्ताह हैं लेकिन बुवाई पूर्ववर्ती फसल पर निर्भर करती है। उत्तरी भारत में बेबी कॉर्न फरवरी से नवम्बर के बीच कभी भी बोया जा सकता है। जबकि इसकी खेती प्रायद्वीपीय एवं पूर्वी भारत में वर्ष भर की जा सकती है। संकर किस्मों के लिए प्रत्येक बार नये बीज का प्रयोग करना चाहिए अन्यथा उपज में कमी आ जाती है।

जायद में अधिक उपज के लिए दो पंक्तियों के बीच 50 से.मी. की दूरी तथा पंक्ति में दो पौधों के बीच की दूरी 20 से.मी. रखनी चाहिए। ज्यादा मोटे दाने वाली मक्का में बीज की मात्रा 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर होनी चाहिए। बेबी कॉर्न के बीज को 3.5–4.0 से.मी. गहरा बोना चाहिए, जिससे बीज मिट्टी से अच्छी तरह से ढक जायें तथा अंकुरण अच्छा हो सके क्योंकि जायद में नमी जल्दी कम हो जाने से अंकुरण में कमी आ जाती है। बेबी कॉर्न की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए इसे सामान्य मक्का से दूर बोये इस हेतु पृथ्क्करण दूरी 150–200 मीटर रखें यह संभव नहीं हो तो 7–10 दिन पहले या बाद में बोये।

बेबी कॉर्न की किस्मेंः बेबी कॉर्न की मुख्य किस्में आईएमएच्बी 1532, जी 5414, सीपी 472, आईएमएच्बी 1539, सेंट्रल मक्का विएल बेबी कॉर्न 2, एच् एम 4, प्रमुख है।

बीज उपचारः बेबी कॉर्न बीज को बीज एवं मृदा जनित रोगों एवं कीट–व्याधियों से बचाने के लिए बुवाई से पहले कवकनाशियों तथा कीटनाशियों से नीचे दिए विवरण के अनुसार उपचारित करना चाहिए।

रोग एवं कीट	कवकनाशी / कीटनाशी	प्रयोग दर प्रति किग्रा बीज
दीमक तथा प्ररोह मक्खी	इमिडाक्लोरपिड़	6 मिली
फॉल आर्मी वर्म	साइंट्रानिलिप्रोएल 19.8% + थियामेथो. क्साम 19.8% एफएस	4–6 मिली

बुवाई की विधि

जायद में उचित उत्पादन प्राप्त करने के लिए मक्का की बुवाई नाली (कूंड) में करनी चाहिए जिससे गर्मी में पौधों की जड़ों में उचित नमी बनी रहें। समतल खेत या बेड प्लांटिग की तुलना में नाली में की गई बुवाई में 10–15 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है । पौधों की जड़ों को पर्याप्त नमी मिलती रहे और जल भराव से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए यह उचित है कि फसल को मेड़ों पर बोया जाये। बुवाई पूर्वी–पश्चिमी दिशा की मेड़ों के दक्षिणी भाग में करनी चाहिए। बीज को उचित दूरी पर लगाना चाहिए। आजकल विभिन्न बीज माप प्रणालियों के प्लान्टर उपलब्ध हैं, किन्तु एन्कलाइंड प्लेट, कपिंग या रोलर टाइप के सीट मीटरिंग प्रणाली सर्वोत्तम पायी गयी है। प्लांटर का उपयोग करना चाहिए, क्योंकि इससे एक ही बार में बीज व उर्वरकां को उचित स्थान पर डालने में मदद मिलती है। मेड़ों पर बुवाई करते समय पीछे की ओर चलना चाहिए।

जीरो टिलेज या शून्य–जुताई तकनीकः पिछली फसल की कटाई के उपरांत बिना जुताई किये मशीन द्वारा मक्का की बुवाई करने की प्रणाली को जीरो टिलेज कहते हैं। इस विधि से बुवाई करने पर खेत की जुताई करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है तथा खाद एवम् बीज की एकसाथ बुवाई की जा सकती है। इस तकनीक से चिकनी मिट्टी के अलावा अन्य सभी प्रकार की मृदाओं में मक्का की खेती की जा सकती है।

जीरो टिलेज मशीन साधारण ड्रिल की तरह ही है, परन्तु इसमें टाइन चाकू की तरह होता है। यह टाइन

मिट्टी में नाली के आकार की दरार बनाता है, जिसमें खाद एवम् बीज उचित मात्रा में सही गहराई पर पहुँच जाता है। जीरो टिलेज विधि अपनाने के निम्नलिखित लाभ हैः

1. इस मशीन द्वारा बुवाई करके करीब 60–70 प्रतिशत ईधन एवं समय की बचत की जा सकती है। साथ ही पर्यावरण प्रदूषण भी कम होता है।
2. इस विधि को अपनाने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का जमाव कम होता है।
3. इस विधि से खेत की बुवाई करने पर लगभग 1000–1500 रू प्रति हेक्टेयर की बचत होती है।
4. खेत को तैयार करने के समय को बचा कर बुवाई 10–15 दिन पहले की जा सकती है और समय से बुवाई करने से अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है।

पोषण प्रबन्धनः मक्का की अधिक उपज के लिए बुवाई से पहले मिट्टी की जाँच करवाना अतिआवश्यक है। भारतीय मृदाओं में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश के अतिरिक्त कुछ सूक्ष्म –तत्वों जैसे – लोहा व जस्ता आदि की कई क्षेत्रों में कमी देखी गई है। उर्वरकां का प्रयोग खेत की दशा तथा उसमें पूर्व में ली गई फसल पर निर्भर करता है। फॉस्फोरस पोटाश तथा जिंक सल्फेट की संपूर्ण मात्रा बुवाई के समय खेत में मिला देना चाहिए। यदि संभव हो तो एन. पी. के. काम्पलेक्स उर्वरकां का प्रयोग करना चाहिए जिससे उर्वरकां के संतुलित प्रयोग में सहायता मिलती है। यदि जायद मक्का आलू की फसल के बाद में ली गई है तो फॉस्फोरस एंव पोटाश डालने की आवश्यकता नहीं है। उर्वरकां का प्रयोग 4–5 हिस्सों में निम्नलिखित विवरण के अनुसार करना चाहिए।

फसल अवस्था	उर्वरक (किग्रा/एकड़)			
	यूरिया	डीएपी	म्युरेट ऑफ पोटाश	जिंक सल्फेट
बुवाई से पूर्व/बुवाई के समय	10	50	40	10
4 पत्ती अवस्था	26	.	.	.
8 पत्ती अवस्था	40	.	.	.
नर मंजरी निकलने से पूर्व	32	.	.	.
बेबी कॉर्न की पहली तुड़ाई करने के बाद	20	.	.	.

जल प्रबंधनः मक्का एक ऐसी फसल है जो न सूखा सहन कर सकती और न ही अधिक पानी सहन कर सकती है। अतः खेत में जल निकासी के लिए नालियाँ बुवाई के समय ही तैयार कर देनी चाहिये व समय पर अतिरिक्त पानी खेत से निकाल देना चाहिए। बेबी कॉर्न में जल प्रबन्धन मुख्य रूप से मौसम पर निर्भर करता है। मक्का की फसल के लिए अधिक व कम पानी देना दोनों ही हानिकारक हैं इसलिए जल प्रबन्धन की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। नमी बनाये रखने के लिए 4–5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। जब फसल को सिंचाई की आवश्यकता हो, उसी समय सिंचाई करनी चाहिए। पहली सिंचाई बहुत ही ध्यान से करने की आवश्यकता होती है, क्योंकि अधिक पानी से छोटे पौधों की बढवार नहीं होती है। पहली सिंचाई में पानी मेड़ों के ऊपर से नहीं बहना चाहिए। सामान्य रूप से नालियों में रिजेज/क्यारियों के दो तिहाई ऊँचाई तक ही पानी देना लाभदायक रहता है। सिंचाई की दृष्टि से नई पौध, घुटनों तक की ऊँचाई, तथा फूल आने की अवस्थाऐं सबसे संवेदनशील होती हैं तथा इन अवस्थाओं में अगर सिंचाई की सुविधा हो तो सिंचाई अवश्य करना चाहिए। बुवाई के 25–30 दिन बाद पहली सिंचाई करते हैं, फिर 15 दिनों के बाद 10 अप्रैल तक और उसके बाद 7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते हैं। उच्च तापमान तनाव से बचने के लिए सिंचाई सुनिश्चित की जानी चाहिए।

ड्रिप सिंचाईः ड्रिप सिंचाई से मक्का उत्पादन सफलतापूर्वक किया जा सकता है। ड्रिप फर्टिगेशन के साथ स्वीट कॉर्न की खेती सबसे फायदेमंद है। ड्रिप लाइन 1–2 मीटर की दूरी पर 40 सेमी से इमिटर की दूरी पर बिछानी चाहिए। 2 लीटर/घंटा इमिटर के डिस्चार्ज के साथ ऐसी एक ड्रिप लाइन से मक्का के दो युग्मित पंक्तियों को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है जो रेतीली दोमट मिट्टी में समान पानी का अनुप्रयोग देती है। ड्रिप सिंचाई से 60% तक पानी की बचत होती है और साथ ही इसके साथ फर्टिगेशन

से उत्पादन भी 40% अधिक मिलता है। उपसतह ड्रिप (एसएसडी) लाइनों को 1.2 मीटर के अंतराल पर 40 सेमी की इमिटर दूरी के साथ 15 सेमी की गहराई पर भी रखा जा सकता है। इसकी सतह ड्रिप की विधि से अधिक जीवन (15 वर्ष से अधिक) है और बढ़ते मक्का के लिए उपयुक्त है।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रणः बेबी कॉर्न में खरपतवारों की अधिक समस्या देखी गई है, जो फसल से पोषण, जल एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं जिसके कारण उपज में 40–50 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है। जायद ऋतु में मक्का की फसल में अनेक खरपतवार आते है जो उचित प्रबन्धन न करने की स्थिति में काफी नुकसान करते है। एट्राजिन का बुवाई के बाद एवं खरपतवारों में अंकुरण से पहले छिड़काव करना चाहिए। मृदा सतह पर छिड़काव के समय नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है। छिड़काव करने वाले व्यक्ति को छिड़काव करते समय आगे की बजाय पीछे की तरफ बढ़ना चाहिए ताकि मृदा पर बनी एट्राजिन की परत ज्यों की त्यों रहे। अच्छे वायुसंचार तथा बचे हुए खरपतवारों को जड़ से उखाड़ने के लिए एक निराई की जा सकती हैं। बुवाई के 20 दिन बाद एक निराई–गुड़ाई करने से बचे हुए खरपतवारों का नियंत्रण हो जाता है। टेम्बोत्रियोन (120 ग्राम/हेक्टेयर), टोपरेमजोन (25 ग्राम/हेक्टेयर), हेलोसल्फुरोन मिथाइल (67.5 ग्राम/हेक्टेयर) और पाइरोक्ससल्फोन (127 ग्राम/हेक्टेयर) जैसे नए शाकनाशी ने श्रमिक संकट को देखते हुए बेबी कॉर्न की खेती को आसान बना दिया। मक्का के लिए अनुशंसित खरपतवार नाशी नीचे दिए गए हैं:

शाकनाशी का नाम	मात्रा/हेक्टेयर		पानी (लीटर/हेक्टेयर)
	सक्रिय घटक (किलो/ग्राम/मिली)	निरूपण (किलो ग्राम/मिली)	
एट्राजीन 50% डब्ल्यूपी	0.5-1 किलोग्राम	1.2 किलोग्राम	500-700
हेलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 75% डब्ल्यूजी	67.5 ग्राम	90 ग्राम	375
पैराक्वाट डाईक्लोराइड 24% एस.एल. बुवाई से पहले (न्यूनतम जुताई)	0.2-0.5 किलोग्राम	0.8-2.0 लीटर	500
पाइरोक्ससल्फोन 85% डब्लूजी	127.5 ग्राम	150	500
टेम्बोत्रियोन 34.4% एस.सी.	120 ग्राम	286 मिली	500
टोप्रामेजोन 33.6% एस सी	25.2 - 33.6 ग्राम. एमएसओ अद्जुवंत / 2 मिली/ली पानी	75 जव 100 मिली. एमएसओ अद्जुवंत	375
मेसोत्रायोन 2.27ः डब्ल्यू एससी. एट्राजिन 22.7% डब्ल्यू एससी	875 ग्राम	3500 मिली	500

फसल सुरक्षाः जायद के मौसम में खरीफ की तुलना में बिमारियों व कीटों का संक्रमण सामान्यतः कम होता है। परन्तु कुछ परिस्थितियों में कुछ बिमारियां तथा कीट फसल को नुकसान पहुंचाते है जिनसे बचने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिए–

(अ) रोग प्रबन्धनः जायद में मुख्य रूप से पत्तियों पर मेडिस और टर्सिकम ब्लाइट का प्रकोप होता है। इसके उपचार के लिए 2.5 कि.ग्रा. जिनेब (डायथेन जेड–78) 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो 15 दिन बाद दोबारा छिड़काव करना चाहिए। बीज जनित तथा मृदा जनित रोगों से बचाव के लिए बुवाई के समय बीज का 4 ग्राम थायरम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

(ब) कीट प्रबन्धनः फसल प्रबंधन उपायों के साथ–साथ खेत में व्यवस्थित तरीके से पौधों की सुरक्षा से हानिकारक स्तरों के नीचे फॉल आर्मीवर्म आबादी का प्रबंधन कर सकते है। एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) निम्नानुसार किया जाना चाहिए।

फॉल आर्मीवर्म: फॉल आर्मीवर्म (*स्पोडोप्टेरा फ्रूजीपरडा*) अमेरिकी मूल का एक विनाशकारी कीट है जिसका हाल ही में भारत में आक्रमण देखा गया और जो वर्तमान में मक्का में आर्थिक नुकसान पंहुचा रहा है। फॉल आर्मीवर्म के लारवा हरे, जैतून, हल्के गुलाबी या भूरे रंगों में दिखाई देते हैं, तथा प्रत्येक उदर खंड में चार काले धब्बों और पीठ के नीचे तीन हल्की पीली रेखाओं से पहचाने जाते हैं। सिर पर आंखों के बीच में अंग्रेजी भाषा के वाई–आकार की एक सफेद रंग की सरंचना बनी होती है।

अंकुरित अवस्था से ही मक्का की फसल का अवलोकन करना शुरू कर दे, यदि विभिन्न आकार के लम्बे और कागजी छिद्र आस–पास के कुछ पौधों की पत्तियों पर दिखाई देते हैं, तो फसल फॉल आर्मीवर्म से प्रभावित हो सकती है। यह लक्षण फॉल आर्मीवर्म लारवा की पहली और दूसरी इंस्टार के कारण होते हैं जो पत्ती की सतह को खुरच कर खाते हैं। इस लक्षण की प्रारंभिक पहचान फॉल आर्मीवर्म के प्रभावी प्रबंधन के लिए बहुत जरूरी है।एक बार जब लारवा तीसरे इंस्टार अवस्था में प्रवेश करता है, तो इसकी खाने की प्रवृति के कारण पत्तियों पर कटे–फटे (गोल से आयताकार आकार के) छिद्र बन जाते हैं। लारवा की वृद्धि के साथ छिद्रों का आकार भी बढ़ता जाता है।

फॉल आर्मी वर्म के नियंत्रण के लिए समेकित कीट प्रबंधन की आवश्यकता है जिनमें निम्न बिन्दुओ को शामिल करना चाहिए।

1. एकल क्रॉस संकर मक्का का चयन करें।
2. उपयुक्त दलहनी फसलों जैसे मूंग के साथ अंतरवर्तीय खेती (इंटर–क्रॉपिंग) करें।
3. एक ही समय में (समकालीन) रोपण करने के लिए सामुदायिक स्तर पर बुवाई के समय की योजना बनाए। परिनगरीय क्षेत्रों में बेबी कॉर्न की खेती में समयान्तराल न होने पर साप्ताहिक अंतराल पर एजाडीरेक्टिन का छिड़काव करें या फसल अंकुरण के शुरू होने के एक सप्ताह से कटाई तक साप्ताहिक अंतराल पर *ट्राइकोग्रामा प्रीटिओसमया टेलीनोमस रेमुस* छोड़ें।
4. फॉल आर्मीवर्म के आगमन और उसकी संख्या की निगरानी हेतु फसल के अंकुरण पर या उससे पहले फेरोमोन ट्रैप 5/एकड़ लगायें। इनकी संख्या बढोतरी को नियंत्रण में रखने के लिए एवं नर पतंगों को बड़े पैमाने पर फँसाने के लिए 15 ट्रैप/एकड़ का उपयोग करें।
5. फसल की बुवाई के तुरंत बाद पक्षियों के बैठने के लिए शरण स्थल (पर्च) 10/एकड़ लगायें ।
6. निरीक्षण करते समय अण्डों और लारवा को हाथ से उठाएं और कुचल कर या केरोसिन के पानी में डुबोकर नष्ट करें।

फॉल आर्मीवर्म क्षति को दर्शाने वाले कुछ पौधों के लिए कीटनाशक प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती है। क्योंकि यह किफायती नहीं होता और फसल की वृद्धि के साथ नियंत्रण उपायों को शुरू करने के लिए संक्रमण सीमा का स्तर भी बढता जाता है।

फसल अवस्था	स्प्रे का क्रम
प्रारंभिक गोब अवस्था (अंकुरण के 2–4 सप्ताह बाद) प्रथम पतंगा / जाल की पहली पकड़ और या 5.10% संक्रमित पौधे	1) पहला स्प्रे 5% नीम बीज कर्नेल इमल्शन या एजेडिराक्टिन 1500 पीपीएम @ 5 मिली/लीटर पानी का करें। 2) यदि आवश्यक हो तो एक सप्ताह के बाद दूसरा स्प्रे *बेसिलस थुरिंगिनेसिस* किस्म कुर्स्टकी (बीटीके) के फार्मूलेशन, डिपल 8 एल @ 2 मिली /लीटर पानी या डेल्फिन 5 डब्ल्यूजी @ 2 जी /लीटर पानी का करें। 3) साप्ताहिक अंतराल पर *ट्राइकोग्रामा प्रीटिओसम* @ 50000 या टेलीनोमस रेमुस @ 10000 प्रति एकड़ छोड़ें। 4) यदि इस स्तर पर संक्रमण 10% से अधिक हो तो सूचीबद्ध किसी भी रासायनिक कीटनाशक का छिड़काव करें। • स्पिनेटोरम 11.7% एसजी: 0.5 मिली /लीटर पानी • क्लोरेंट्रानिलिप्रोएल 18.5% एससी: 0.4 मिली/लीटर पानी
मध्य गोब अवस्था से बेबी कॉर्न (अंकुरण के 4–7 सप्ताह बाद)	1) पहला स्प्रे नीम बीज कर्नेल इमल्शन या एजेडिराक्टिन 1500 पीपीएम / 5 मिली/लीटर पानी का करें। 2) यदि आवश्यक हो तो एक सप्ताह के बाद दूसरा स्प्रे *बेसिलस थुरिंगिनेसिस* स्प्रे या साप्ताहिक अंतराल पर *ट्राइकोग्रामा प्रीटिओसमया* टेलीनोमस रेमुस छोड़ें। 3) यदि इस स्तर पर संक्रमण 10% से अधिक हो तो एन्टोमोपैथोजेनिक कवक *मैटारिजियम एनिसोप्लाए* (1×10^8 सीऍफयू/ग्राम) @ 5 ग्राम/लीटर पानी या नोमुरिया रिलेयी चावल अनाज फॉर्मूलेशन (1×10^8 सीऍफयू/ग्राम) @ 3 ग्राम/लीटर पानी का छिड़काव करें। 4) इस अवस्था में किसी भी कीटनाशक का प्रयोग नहीं करें और लारवा को हाथ से पकड़कर नष्ट करें ।

प्ररोह मक्खी (*अथेरिगोना स्पीशीज*):

यह जायद की फसल का मुख्य कीट है जो पौध अवस्था पर आक्रमण करता है। छोटे मैगट पतियों की शिरा से नीचे–नीचे छुपकर पौधे की सतह तक पहुँच जाते हैं इसके बाद वे बढ़ने वाले भाग अर्थात मध्य हिस्से को नुकसान पहुँचाते है जिससे डेड हेर्ट बन जाता है। समय पर बुवाई करे अर्थात फरवरी के प्रथम सप्ताह तक बुवाई कर लें। बुवाई से पहले 6 मिलीलीटर इमिडाक्लोप्रिड़ प्रति किलोग्राम बीज से उपचारित करना चाहिए।

झण्डों को तोडना (*डि–टैसलिंग*): गुणवत्ता हेतु सामान्य मक्का से 300–400 मीटर पृथक्करण दूरी रखें। ऐसा संभव नहीं है तो इसको 10 दिन पहले या बाद में बोयें। झंडा बाहर दिखाई देते ही निकाल देना चाहिए। इसे (झंडे को) पशुओं को खिलाया जा सकता है। 8–10 दिनों तक झण्डे (नर मंजरी) की तुड़ाई करें। हालाँकि कुछ नर बंध्य किस्मों जैसे जी 5414 उगाने पर नर मंजरी को तोड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती है परन्तु इस किस्म के चारे की गुणवत्ता दूसरी किस्मों के समतुल्य नहीं होती है और इसका बीज भी बहुत महंगा होता है।

तुड़ाई: बेबी कॉर्न की तुडाई के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना बहुत जरूरी है। सिल्क के आने के 1–3 दिन के अन्दर भुट्टें की तुड़ाई करें। बेबी कॉर्न के भुट्टों को 3–4 से. मी. सिल्क आने पर तोड़ लेना चाहिए। भुट्टा तोड़ते समय भुट्टे के ऊपर की पत्तियाँ नहीं हटानी चाहिए। पत्तियाँ हटने से ये जल्दी खराब हो जाती हैं।

उपज: बेबी कॉर्न की उपज इसके किस्मों की क्षमता (जीनोटाइप) और जलवायुवीय दशाओं पर निर्भर करती है। अच्छी फसल की स्थिति में 6–7 क्विंटल प्रति एकड़ छिली हुई बेबी कॉर्न प्राप्त की जा सकती है। इसके अलावा 80–90 क्विंटल प्रति एकड़ हरा चारा भी मिलता है जिससे अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। इसके अलावा कई उत्पाद भी प्राप्त होतें हैं जैसे नरमंजरी, रेशा, छिलका और तुड़ाई के बाद बचा हरा पौधा। ये सभी उत्पाद बहुत ही पौष्टिक होते हैं, जिन्हें पशुओं को चारे के रूप में खिलाया जा सकता है।

कटाई उपरान्त प्रबंधन:

- बेबी कॉर्न का छिलका तुड़ाई के बाद उतार लेना चाहिए। यह कार्य छायादार एवं हवादार जगहों पर करना चाहिए।
- भंडारण ठंडी जगहों पर करना चाहिए।
- छिलका उतरे हुए बेबी कॉर्न को ढेर लगाकर नहीं रखना चाहिए, बल्कि प्लास्टिक की टोकरी, थैले या अन्य कोई कन्टेनर में रखना चाहिए।
- बेबी कॉर्न को तुरंत मंडी या प्रसंस्करण इकाई (प्रोसेसिंग प्लान्ट) में पहुँचा देना चाहिए।

बेबी कॉर्न से आर्थिक लाभ (प्रति एकड़)

• लागत मूल्य	₹ 16000 से 20000/–
• कुल लाभ	₹ 41500 से 46000/–
• शुद्ध लाभ	₹ 25500 से 30000/–
• उपज	₹ 6–7 कुन्तल
• दर	₹ 60–80/– प्रति किलो
• हरा चार	₹ 80–90 कुन्तल
• दर	₹ 50/– प्रति कुन्तल

फ्रीजिंग (प्रशीतन): अन्य प्रशीतित (फ्रोजेन) सब्जियों की तरह बेबी कॉर्न को भी लम्बे समय तक बर्फ में संभाल कर रखा जा सकता है। इस जमे हुए बेबी कॉर्न को खाद्य उत्पाद बनाने के लिए प्रभावी रूप से उपयोग में लाया जा सकता है। जमे हुए बेबी कॉर्न से तैयार किए गए सूप व सब्जियां ताजे बेबी कॉर्न से बने इन व्यंजनों की ही तरह स्वादिष्ट होती हैं। कई प्रकार के व्यंजनों के लिए जमे हुए बेबी कॉर्न को सीधे भी उपयोग में लाया जा सकता है।

विपणन (माक्रेटिंग): दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई आदि बड़े शहरों में इसकी बिक्री मंडी में की जा रही है। कुछ किसान इसकी बिक्री सीधे ही होटल, रेस्तरां, कम्पनियाँ (रिलायन्स, सफल आदि) में कर रहे हैं। बेबी कॉर्न के अचार एवं कैन्डी की अमेरिका एवं कुछ यूरोपियन देशों में बहुत मांग है। आजकल यूरोपीय बाजारों में ताजा बेबी कॉर्न का निर्यात भी भारत से किया जा रहा है और इस सम्बन्ध में पिछले कुछ वर्षों में भारत एक महत्वपूर्ण देश बनकर उभरा है।

उपोष्ण जलवायु वाले राज्यों में गन्ना खेती के लिए उन्नत सस्य तकनीक

ए.के. सिंह, नवनीत कुमार एवं ललिता राणा
ईख अनुसंधान संस्थान
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)–848125

गन्ना भारतवर्ष की प्रमुख नकदी फसलों में से एक है तथा करोड़ों किसानों के साथ–साथ चीनी उद्योग से जुड़े लाखों लोगों की जीविका भी इस फसल पर प्रत्यक्षतः आधारित है। भारत की कुल कृषि योग्य भूमि के मात्र 3.4 प्रतिशत क्षेत्रफल पर आच्छादित गन्ने की फसल देश के सकल घरेलू उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान करती है। वर्तमान में भारतवर्ष अग्रणी गन्ना उत्पादक देशों में प्रमुख है। हमारे देश में गन्ना ही चीनी का एक मात्र स्रोत है एवं सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान लगभग 1.1 प्रतिशत है। वर्ष 2017–18 में 47.3 लाख हे0 क्षेत्र से 79.7 टन/हे0 उत्पादकता के साथ 3769 लाख टन गन्ने का उत्पादन किया गया। दिन–प्रतिदिन नवीनतम कृषि अनुसंधानों के फलस्वरूप गन्ने के उत्पादन में निरन्तर वृद्वि हो रही है। यदि पिछले पाँच दशकों में गन्ने की पैदावार का विश्लेषण करें तो यह ज्ञात होता है कि गन्ने के क्षेत्रफल में 2.45 गुना, उत्पादन में 5 गुना एवं उत्पादकता में 2.32 गुना की बढ़ोत्तरी हुई। गन्ने की पैदावार में लगातार वृद्वि के बावजूद भी विभिन्न राज्यों की गन्ना उत्पादकता में बहुत अन्तर है। गन्ने की उत्पादकता छत्तीसगढ़ में 25.7 टन प्रति है. एवं तमिलनाडु में 104.3 टन प्रति हे0 पाई गयी है, जोकि सम्भावित एवं वास्तविक उपज में बहुत बड़े अन्तर का द्योतक है। गन्ने की उपज में अस्थिरता, कारकों की उत्पादकता में भारी गिरावट, बढ़ती हुई उत्पादन लागत, लाभांश में कमी एवं अस्थिर बाजार किसानों के समक्ष मुख्य मुद्दे बन गये हैं। अतः इस महत्वपूर्ण व्यापारिक फसल की मूलभूत कठिनाईयों से छुटकारा पाने व गन्ने की खेती को टिकाऊ बनाने हेतु नये कृषि अनुसंधान आयाम वांछनीय हैं।सीमित क्षेत्रफल से अधिक उत्पादन लेने के लिये उर्वरकां एवं रसायनों का अत्यधिक मात्रा में प्रयोग पर्यावरण एवं मृदा स्वास्थ्य के लिये जटिल समस्या है। ऐसी स्थिति में खेती के ऐसे उपायों को अपनाने की आवश्यकता है जो बढ़ती जनसंख्या के भरण पोषण हेतु उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ मृदा स्वास्थ्य को अक्षुण रख सके।

देश की बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप सन् 2030 तक शक्रा पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष आवश्यकता 35 किग्रा0 तक पहुॅच जाने का अनुमान है जिसमें 20 किग्रा0 चीनी व 15 किग्रा. गुड़ एवं खाण्डसारी सम्मिलित है अतः इनकी पूर्ति के लिए अधिकतम गन्ना उत्पादन तथा चीनी परता प्राप्त करने की महती आवश्यकता है। 'मृदा–गन्ना– चीनी' कड़ी के दो प्रमुख जैविक अंग 'मृदा–गन्ना' व 'गन्ना –चीनी' हैं। विशेष तौर पर पहला अंग 'गन्ना उत्पादन' व दूसरा अंग 'चीनी परता' से सम्बंधित है। इन अंगों को क्रमशः समेकित पोषक तत्व प्रबंधन व कटाई उपरान्त प्रबन्धन प्रभावित करते हैं। प्रस्तुत लेख में प्रमुख प्रजातियों के अलावा विभिन्न सस्य क्रियायों जैसे बुवाई विधि ायॉ समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन, जल प्रबन्धन, खरपतवार नियंत्रण, मिट्टी चढ़ाना, कटाई प्रबन्ध एवं सहफसली खेती द्वारा चीनी परता व उत्पादन बढ़ाने के तथ्यों एवं तकनीकों की विस्तृत विवेचना की गयी है।

प्रमुख प्रजातियां :

उत्तर भारतीय राज्यों में उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, बिहार एवं मध्य प्रदेश प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्य हैं। इन राज्यों के लिए (1) **शीघ्र पकने वाली प्रजातियां** : को0 पू0 16437, को.पू. 9301, का. पू. 112, सी.ओ.एस. 687, सी.ओ.एस. 8436, सी.ओ.एस. 88230, सी.ओ.एस. 90265, सी.ओ.एस. 95255, को.लख. 94184, को.लख. 12207, को. लख. 11203, को.लख. 9709, बी. ओ. 153, बी. ओ. 139, को.लख. 07201, सी.ओ.एच. 35, सी.ओ.जे. 64, सी.ओ. जे. 83 एवं को.पन्त 84211 (2) **मध्य देर से पकने वाली प्रजातियां** : को.लख. 11206, को.लख. 12209, को.लख. 09204, सी.ओ.एस. 767, सी.ओ.एस. 7918, सी.

ओ.एस. 8432, सी.ओ.एस. 92263, सी.ओ.एस. 92423, सी. ओ.एस. 88216, सी.ओ.एस. 26268, सी.ओ.एस. 96275, सी.ओ.एस. 94257, बी.ओ. 154 एव बी. ओ. 137।

बुवाई विधियॉ :

किसी भी विशेष बुवाई विधि का उद्देश्य मिल योग्य गन्ने की वांछित संख्या तथा अधिक लम्बाई, मोटाई व वजन प्राप्त करना होता है। गन्ने की उत्पादकता में मिल योग्य गन्ने की संख्या का योगदान 40 प्रतिशत होता है जबकि लम्बाई, मोटाई व वजन का क्रमशः 27, 3 व 30 प्रतिशत योगदान है। इस प्रकार अगर 100 टन प्रति हेक्टेयर गन्ने का उत्पादन लेना है तो मिल योग्य गन्नों की संख्या 1 लाख व हर गन्ने का वजन 1 किलोग्राम होना चाहिए।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये हमारे देश में गन्ना बोने की कई विधियॉ प्रचलित हैं जिसमें समतल विधि सबसे अधिक प्रयोग में लायी जाती है। नये–नये अनुसंधानों के फलस्वरूप गन्ने की उपज एवं चीनी परता बढ़ाने के लिए बुवाई की नवीनतम विधियां विकसित हुई हैं। बुवाई की नई विधियों में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित विधि 'रिंग–पिट' का विकास वांछित दोनों उद्देश्यों के लिए सर्वाधिक हुआ है। रिंग–पिट विधि द्वारा गन्ना लगाने से मिल योग्य गन्ना 'मूल प्ररोह' से ही बनते हैं जो कि लम्बे, मोटे व भारी होते हैं एवं इनका विकास भी एक जैसा होता है जिससे चीनी परता में बढ़ोत्तरी होती है। इस विधि से को.लख. 8001 प्रजाति के गन्ने की उपज 184 टन प्रति है. पायी गई है।

इसी भांति नाली विधि से बोये गये गन्ने की उपज एवं चीनी परता दोनों में वृद्धि पायी गयी है। इस विधि में गन्ने के जमाव के उपरान्त फसल के क्रमिक बढ़वार के साथ मेंड़ो की मिट्टी नाली में पौधे की जड़ पर गिराते जाते हैं जिससे प्राथमिक एवं द्वितीयक कल्ले कम निकलते हैं और मुख्यरूप से 'मूल प्ररोह' ही विकसित होकर मिल योग्य गन्ना बनाते हैं जिससे चीनी परता में बढ़ोत्तरी होती है।

उपरोक्त दोनों विधियों में चूँकि गन्ने के टुकड़े गहराई में बोये जाते हैं इसलिए गन्ना गिरता नहीं है एवं गन्ने की गुणवत्ता बनी रहती है तथा चीनी परता में बढ़ोत्तरी होती है। इसके अतिरिक्त इनसे अच्छी पैदावार व शीघ्र चीनी वाली बहु–पेड़ी भी ली जा सकती है। गेहूँ काटने के बाद देर से बोये गये गन्ने में कम समय मिलने के कारण उपज सम्बंधी कारक जैसे कल्ले व मिल योग्य गन्ने की संख्या, उनकी लम्बाई, मोटाई व वजन कम रह जाता है परन्तु उपज की पूर्ति द्विपंक्ति विधि से गन्ना बोकर की जा सकती है क्योंकि इससे एक जैसे अधिक संख्या में मिल योग्य गन्ने बनते हैं जिससे गन्ना एवं चीनी दोनों का उत्पादन बढ़ता है।

पोषक तत्व प्रबन्धन :

गन्ना लम्बी अवधि व अधिक उत्पादन वाली फसल होने के कारण भूमि से काफी मात्रा में पोषक तत्वों का दोहन करती है (सारिणी 1)। अतः गन्ने की उपज व गुणवत्ता दोनों बनाये रखने के लिए विभिन्न पोषक तत्वों का उचित मात्रा व अनुपात में फसल को देना अति आवश्यक है। उत्तर भारत में सामान्यतः नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटेशियम 150:60:60 किग्रा/है. के अनुपात में देते हैं। संस्तुत पोषक तत्वों में से फॉस्फोरस एवं पोटेशियम की पूरी मात्रा एवं नत्रजन की एक तिहाई मात्रा बुवाई के समय ही कूड़ में डाल देते हैं। शेष नत्रजन की मात्रा कल्ले निकलते समय एवं फिर उसके 1 माह के अंतराल पर खेत में पौधे की जड़ के पास प्रयोग करें।

आवश्यक पोषक तत्वों में नत्रजन का महत्व, चीनी परता एवं उत्पादन पर सबसे अधिक होता है। नत्रजन का प्रभाव सर्वविदित होने के कारण अधिक उत्पादन के लिए किसान इसका ही प्रयोग करते हैं लेकिन चीनी परता बढ़ाने की दृष्टि से अन्य पोषक तत्वों को संतुलित मात्रा में देना आवश्यक है। नत्रजन के साथ–साथ मृदा की जाँच के आधार पर फॉस्फोरस एवं पोटेशियम का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। फॉस्फोरस पौधों में अधिक नत्रजन के प्रभाव को संतुलित करता है। गन्ने के रस में मौजूद फॉस्फोरस मटमैलेपन को दूर करने में मदद करता है। इसलिए रस में 300 पी0 पी0 एम0 फॉस्फोरस का होना आवश्यक होता है जिससे चीनी दानेदार व सफेद बनती है।

सरिणी 1 : गन्ने द्वारा मृदा से पोषक तत्वों का दोहन

पोषक तत्व	100 टन / है. गन्ने द्वारा तत्वों का दोहन (किग्रा./है.)
नत्रजन	205
फॉस्फोरस	55
पोटेशियम	275
गंधक	30
लोहा	3.5
मैंगनीज	1.2
जिंक	0.6
तांबा	0.2

पोटेशियम कोशिकाओं में पानी धारण क्षमता बढ़ाकर पौधों को सूखे से बचाता भी है। दक्षिण भारत में पोटेशियम के छिड़काव से चीनी की पैदावार में बढ़ोत्तरी पायी गयी। पोटेशियम गन्ने में शक्रा संग्रहित करने के साथ–साथ गन्ने की पेराई से रस की मात्रा भी बढ़ाता है।

जिन मृदाओं में गंधक की कमी होती है उसमें गंधक के प्रयोग से गन्ने में चीनी का परता बढ़ता है। विशेष रूप से तिलहन समायोजित गन्ना आधारित फसल चक्रों में नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटेशियम के बाद गंधक चौथा आवश्यक तत्व माना जाता है। सल्फर नाइट्रेटरिडक्टेज इन्जाइम की कार्यशक्ति बढ़ाकर नत्रजन उपयोग क्षमता को बढ़ाता है।

कैल्सियम पौधों में कोशिकाओं की झिल्लियों की बनावट व दैहिकी दशाओं को बनाये रखने के लिए आवश्यक है। इसकी कमी से पौधों में खोखलापन आ जाता है तथा चीनी

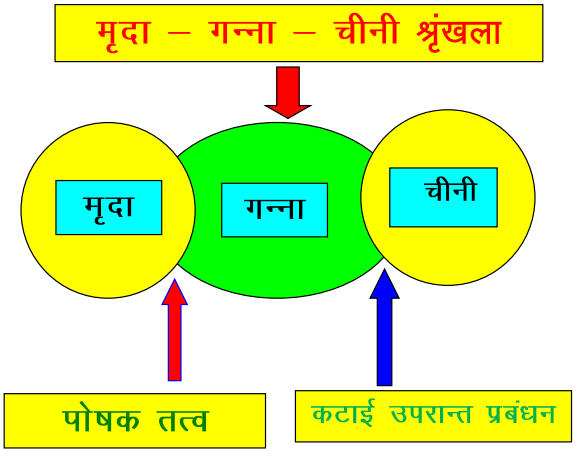

चित्र : 1

का संग्रह कम होने से परता कम पड़ता है, पौधों में सामान्य दैहिकी क्रियाओं के लिए कुछ पोषक तत्वों का सम्बन्ध इस प्रकार है– नत्रजन : गंधक, कैल्शियम : फॉस्फोरस व पोटेशियम : मैग्नीशियम हर एक जोड़ों के तत्व एक दूसरे के कार्य पूरक माने जाते हैं।

समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन :

जैसा कि चित्र:1 से स्पष्ट है 'मृदा–गन्ना–चीनी' कड़ी के दो प्रमुख जैविक अंग मृदा–गन्ना' व 'गन्ना–चीनी' हैं विशेष तौर पर पहला अंग गन्ना उत्पादन व दूसरा अंग 'चीनी परता' से सम्बंधित है। इन अंगो को क्रमशः समेकित पोषक तत्व प्रबंधन व कटाई उपरान्त प्रबन्धन प्रभावित करते हैं। यह पाया गया है कि पहला अंग मृदा उत्पादकता, गन्ना उपज व चीनी परता तीनों को नियंत्रित करता है। इसीलिए यह कहा गया है कि 'चीनी खेत में बनती है न कि मिल में'या 'चीनी का संस्करण खेत में और रिकवरी मिल में। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए गन्ने में समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन बहुत आवश्यक है क्योंकि मृदा में ह्यूमस स्तर बढ़ाने व उसे संरक्षित रखने तथा सूक्ष्म जीवाणु गति विधियों के लिये आदर्श वातावरण बनाये रखने के लिये कार्बनिक खादों का प्रयोग अति आवश्यक है। जैविक खादों के प्रयोग से गन्ने के लिये आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों की अधिकांश मात्रा की पूर्ति की जा सकती है, जिनका चीनी परता बढ़ाने में महत्व पूर्ण योगदान है।

सिंचाई प्रबन्धन :

उत्तर भारत के विभिन्न भागों में गन्ने की फसल को 1500 से 1800 मिलियन लीटर पानी की आवश्यकता होती है जिसका औसतन आधा भाग वर्षा से एवं आधा सिंचाई से पूरा किया जाता है। यद्यपि गन्ने में सिंचाई का चीनी परता पर प्रभाव सीधे तौर पर नहीं पाया गया है परन्तु गन्ने की उपज का पानी से सीधा सम्बन्ध है। जैसे–जैसे हम सिंचाई की संख्या बढ़ाते हैं, गन्ने की पैदावार भी बढ़ती है। अच्छी चीनी परता व उत्पादन के लिये 6–7 सिंचाइयॉ (2 सिंचाई वर्षा उपरान्त) करना लाभप्रद पाया गया है।

सीमित सिंचाई साधनों की स्थिति में डोल कँड़ (स्किप फरो–एक नाली छोड़कर) विधि द्वारा सिंचाई करने से 32%

प्रतिशत पानी की बचत होती है एवं गन्ने की पैदावार 14 प्रतिशत तक बढ़ जाती है (सारिणी –2)। वसन्त दादा शुगर इन्सटीट्यूट (वी.एस.आई.), पूणे में किये गये अन्वेशण से पाया गया है कि बूँद–बूँद (ड्रिप) सिंचाई विधि से पानी की बचत के साथ–साथ गन्ने की पैदावार 20–30 प्रतिशत व चीनी परता 0.2–0.6 प्रतिशत बढ़ जाता है।

सारिणी 2: जल प्रबन्ध की डोल कूड़ विधि का गन्ने की पैदावार एवं पोल प्रतिशत पर प्रभाव

सिंचाई विधि	गन्ने की उपज (टन/प्रति है0)	पोल प्रतिशत
डोल कूड़ विधि	110	18.66
द्विपंक्ति बुवाई में डोल कँड़ विधि	129	18.32
समान्य विधि	113	19.08

खरपतवार नियंत्रण :

गन्ने में अनियंत्रित खरपतवार 40 प्रतिशत सिंचाई पानी व 40 प्रतिशत नत्रजन का शोषण करके गन्ने की 40 प्रतिशत उपज कम कर देते हैं। इसके अलावा खरपतवार के प्रकोप से गन्ने में रेशे की मात्रा बढ़ जाती है व रस की गुणवत्ता भी घटती है। शोध परिणामों से यह ज्ञात हुआ है कि खरपतवार नियंत्रण का चीनी की उपज पर सीधा प्रभाव पड़ता है (सारिणी–3)। अतः गन्ने की उपज एवं चीनी परता बढ़ाने हेतु समेकित खरपतवार नियंत्रण आवश्यक है।

सारिणी 3: खरपतवार नियंत्रण के लिए गुड़ाई का गन्ना एवं चीनी उत्पादन पर प्रभाव

गुड़ाई का समय	गन्ने की उपज (टन/है0)		चीनी उत्पादन (टन/है0)	
	खरपतवार सहित	खरपतवार रहित	खरपतवार सहित	खरपतवार रहित
अगेती कल्ले की अवस्था	62.9	64.7	8.03	8.45
मध्य कल्ले की अवस्था	51.1	60.0	6.66	7.66
पिछेती कल्ले की अवस्था	50.6	58.3	6.53	7.41
अगेती एवं मध्य कल्ले की अवस्था	67.2	68.9	8.62	8.85
अगेती एवं पिछेती कल्ले की अवस्था	66.4	67.4	8.46	8.36
मध्य एवं पिछेती कल्ले की अवस्था	56.3	61.7	7.17	7.82
अगेती ,मध्य, पिछेती कल्ले की अवस्था	69.4	70.0	8.88	8.09
बिना गुड़ाई के	45.6	51.8	5.93	6.69

मिट्टी चढ़ाना :

गन्ने में मिट्टी चढ़ाना एक महत्वपूर्ण सस्य क्रिया है। मानसून शुरू होते ही मिट्टी चढ़ाने का कार्य किया जाता है। मिट्टी चढ़ाने से द्वितीयक कल्लों का निकलना बन्द हो जाता है, खेत में खरपतवारों का नियंत्रण होता है तथा गन्ना गिरने से बचता है। इसके फलस्वरूप मूल प्ररोहों एवं प्राथमिक कल्लों से बनने वाले मिल योग्य गन्नों की संख्या अधिक होती है जिससे चीनी परता में बढ़ोत्तरी होती है (सारिणी–4)।

सारिणी 4: मिट्टी चढ़ाने से पोल प्रतिशत पर प्रभाव

उपचार	रस में पोल प्रतिशत	
	अक्टूबर	दिसम्बर
बिना मिट्टी चढ़ाये	13.30	15.78
एक बार मिट्टी चढ़ाना	13.71	16.32
दो बार मिट्टी चढ़ाना	13.84	16.45

सह–फसली खेती :

शरदकालीन गन्ना से बसंत कालीन गन्ने की अपेक्षा 15– 20 प्रतिशत अधिक उत्पादन बढ़ने के साथ–साथ 0.1 से 0.5 इकाई चीनी का परता भी बढ़ जाता है। परन्तु शरदकालीन गन्ने के अन्तर्गत क्षेत्रफल केवल 8–10 प्रतिशत तक ही सीमित है। शरदकालीन गन्ने में अन्तः फसली खेती से ही इसका क्षेत्रफल बढ़ाया जा सकता है।

इसके लिए अधिक आय एवं कम अवधि वाली फसलों को गन्ने के साथ अन्तः फसल के रूप में लगाकर मृदा की उत्पादन क्षमता बढ़ाने, उत्पादन लागत कम करने एवं उत्पादन पद्धति को टिकाऊ बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान सम्भव है। अनुसंधान के आधार पर यह पाया गया है कि सहफसली खेती से चीनी परता में बढ़ोत्तरी होती है। 39 स्थानों का 11 वर्ष तक के परिणामों से यह पता लगता है कि सहफसली खेती से चीनी परता में 0.37 इकाई एवं शुद्धता में 1.2 इकाई की बढोत्तरी होती है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा गन्ने के साथ विभिन्न सहफसली पद्धतियॉ विकसित की गई हैं (सारिणी–5)।

कटाई प्रबन्धन :

उपोष्ण क्षेत्र में औसत चीनी की परता लगभग 8 से 9 प्रतिशत के मध्य होता है जो कि कम है। चीनी परता कम होने का एक मुख्य कारण उचित ढंग से गन्ने की कटाई का न होना भी है। अतः अधिक चीनी परता के लिये उपयुक्त कटाई क्रम का अपनाना अति आवश्यक है। अनुसंधान के आधार पर वैज्ञानिकों द्वारा एक कटाई क्रम का ब्यौरा तैयार किया गया है (सारिणी –6)। इस प्रकार की कटाई क्रम का अनुपालन करके चीनी परता में वृद्वि अवश्य की जा सकती है। कटाई में विलम्ब करने से गन्ने में रस की मात्रा पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

गन्ने की कटाई विल्कुल जमीन की सतह से करनी चाहिए। एक अध्ययन में यह पाया गया कि गन्ने की कटाई जमीन से 8 से 10 सेमी0 ऊपर करने पर क्रमशः 36.1 एवं 67.5 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर चीनी का नुकसान होता है क्योंकि गन्ने का अधिक शक्रा युक्त निचला भाग खेत में ही छूट जाता है।

सारिणी 5 : विभिन्न फसल प्रणाली में ईख एवं सहफसलों का उपज

फसल प्रणाली	उपज (क्विंटल / हे0)		लाभ : लागत अनुपात
	ईख	सहफसल	
शरदकालीन ईख	**985**	–	1.75
ईख + आलू	980	250	2.29
ईख + गेहँ	850	25 (अनाज) 26 (भूसा)	1.82
ईख + मसूर	900	12	1.88
ईख + राजमा	885	12	1.88
ईख + लहसुन	982	40	2.46
ईख + धनियाँ	887	12	2.36
ईख + मंगरैला	886	14	2.15
बसंतकाली ईख	**870**		1.58
ईख + मूंग	830	8	1.74
ईख + उरद	835	5	1.65
ईख + भिन्डी	820	60	2.05

सारिणी 6 : अधिक चीनी के लिये गन्ने का कटाई क्रम

अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल
उत्तर भारत के लिये						
शरदकालीन गन्ने की द्वितीय पेड़ी	शरदकालीन बावक गन्ना	बसंतकालीन द्वितीय पेड़ी (अगेती)	बसंतकालीन प्रथम पेड़ी (अगेती)	बसंतकालीन प्रथम पेड़ी (मध्य देर)	बसंतकालीन बावक गन्ना (मध्य देर)	बसंतकालीन बावक गन्ना (मध्य देर)
शरदकालीन गन्ने की प्रथम पेड़ी	बसंतकालीन द्वितीय पेड़ी (अगेती)	बसंतकालीन प्रथम पेड़ी (अगेती)	बसंतकालीन द्वितीय पेड़ी (मध्य देर)	बसंतकालीन बावक गन्ना (अगेती)	बसंतकालीन बावक गन्ना (मध्य देर)	बसंतकालीन बावक गन्ना (मध्य देर
दक्षिण भारत के लिये						
अक्टूबर की पेड़ी	अक्टूबर का बावक गन्ना	नवम्बर का बावक गन्ना	दिसम्बर की पेड़ी	जनवरी की पेड़ी	फरवरी की पेड़ी	फरवरी का बावक गन्ना
अक्टूबर का बावक गन्ना	नवम्बर की पेड़ी	दिसम्बर की पेड़ी	दिसम्बर का बावक गन्ना	जनवरी का बावक गन्ना दिसम्बर का बावक गन्ना	जनवरी का बावक गन्ना	——

पूसा अरहर 16 की उत्पादन तकनीकी

रणजीत शरद राजे, ज्ञानेन्द्र सिंह एवं सुरेश नेबापुरें,
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसनधान संस्थान, नई दिल्ली

विकसित उत्पादन तकनीकी का अनुपालन करते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित अरहर की उन्नत किस्म से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है।

उत्पादन तकनीकी

खेत का चुनाव : अच्छे जल निकास व उच्च उर्वरता वाली दोमट या बलुई दोमट भूमि सर्वोतम रहती है। खेत में पानी का ठहराव फसल को हानि पहुँचाता है।

खेत की तैयारी : मिट्टी पलट हल से गहरी जुताई के उपरांत 2–3 जुताई हल अथवा हैरो से करना उचित रहता है। प्रत्येक जुताई के बाद सिंचाई एवं जल निकास की पर्याप्त व्यवस्था हेतु पाटा लगाना आवश्यक है।

बुवाई का समय : 28 मई से 5 जून तक।

बीज की मात्रा : 19 से 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर।

बीज उपचार : 10 कि.ग्रा. अरहर के बीज के लिए राइजोबियम कल्चर का एक पैकेट पर्याप्त होता है। 50 ग्रा. गुड़ या चीनी को आधा लीटर पानी में घोल कर उबाल लें। घोल के ठंडा हो जाने पर उसमें राइजोबियम कल्चर मिला दें। इस कल्चर में 10 कि.ग्रा. बीज डालकर अच्छी प्रकार से मिला लें ताकि प्रत्येक बीज पर कल्चर का लेप चिपक जायें। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर दूसरे दिन बोया जा सकता है। उपचारित बीजों को कभी भी धूप में न सुखाऐं।

उर्वरक

नत्रजन	:	20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
फॉस्फोरस	:	40 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
पोटाश	:	20 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर
सल्फर	:	20 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर
जिंक सल्फेट	:	20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर .

उर्वरकां का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर करें।

दूरी : कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. होनी चाहिये।

छटाई : बुवाई के 15 से 20 दिन के बाद छटाई कर पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. कर दें।

खरपतवार नियंत्रण : बिजाई के तुरंत बाद उसी दिन पेडिमिथलीन @ 1.0 कि.ग्रा. ए. आई/है. का छिड़काव करें। हाथ या खुरपी से 25 व 45 दिनों पर खरपतवार नियंत्रण करें।

अवांछनीय पौधों को निकालना : बहुत अधिक ऊँचाई तथा लाल रंग के फूल वाले पौधों को उखाड़ कर अलग कर दें।

सिंचाई : बुवाई से पूर्व एक सिंचाई पलेवा के रुप में और लम्बे समय तक वर्षा न होने पर फली विकास की अवस्था के समय फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

पौध संरक्षण :–

उकठा (*फ्यूजेरियम विल्ट*) : मेंकोजेब 63 प्रतिशत + कार्बेनडाजिम 12 प्रतिशत @ 2 ग्रा./कि.ग्रा. बीज को उपचारित करें।

ब्लाइट : बीज को रीडोमील एम.जेड. या मेटालेक्जिल एम.जेड. 2 ग्रा./कि.ग्रा. से उपचारित करें।

बन्ध्यमोजेक : प्रोपरगाइट पेडिमिथलीन @ 0.1 प्रतिशत का दो बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव 25 दिनों पर व दूसरा छिड़काव 45 दिनों पर करें। इसके बाद डिकोफौल 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण :– कीट नियंत्रण के लिए निम्न कीटनाशकों का छिड़काव उचित समय, उचित मात्रा व उचित विधि से करें।

(अ.) फली छेदक, चूसक एवं ब्लिस्टर बीटल कीट नियंत्रण के लिए डेल्टामेथ्रिन 2.8 प्रतिशत ई.सी. (1 मि.ली./लीटर) या इंडोक्साकार्ब 15.8 प्रतिशत ई.सी. (1 मि.ली./लीटर) का छिड़काव कली की शुरुआत के चरण में करें।

(ब.) धब्बेदार फली छेदक एवं अन्य फली छेदक के नियंत्रण के लिए क्लोरॅन्ट्रानिलीप्रोल 18.5 प्रतिशत एस.सी. (3 मि.ली./10 लीटर) का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करें।

(स.) यदि आवश्यक हो तो फ्लुबेन्डामाईड 39.35 एस.सी. (2 मि.ली./10 लीटर) या स्पिनोसैड 45 प्रतिशत एस.सी. (2 मि.ली./10 लीटर) या डेलटामेथ्रिन 2.8 ई.सी. (1 मि.ली./लीटर) का छिड़काव फली छेदक, ब्लिस्टर बीटल व बग के नियंत्रण के लिए करें।

कटाई : जब फसल की 80 प्रतिशत फलियाँ पक जायें तब फसल को काट लें।

अरहर के सफल उत्पादन के लिये निम्न बिन्दु अति महत्वपूर्ण है:–

1. खेत उचित जल निकास युक्त होना चाहिए। पानी का ठहराव फसल को नुकसान पहुँचाता है।
2. उच्च उर्वरता वाली दोमट भूमि सर्वोतम रहती है।
3. **छटाई** : बुवाई के 15 से 20 दिन बाद छटाई कर पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. कर दें।
4. **खरपतवार नियंत्रण** : हाथ या खुरपी से 25 व 45 दिनों पर खरपतवार नियंत्रण करें। बुवाई के तुरंत बाद पेंडिमिथलीन 1.25 कि.ग्रा. ए. आई/है. का छिड़काव करें।
5. **कीट नियंत्रण** : कीटो के नियंत्रण के लिए कीटनाशक का छिड़काव कली बनते समय अति आवश्यक है।
   - पहला छिड़काव डेल्टामेथ्रिन 2.8 प्रतिशत ई.सी. का कली बनने की अवस्था में ब्लिस्टर बीटल व जैसिड की रोकथाम के लिए करें।
   - 15 दिन के अंतराल से छिड़काव क्लोरॅन्ट्रानिलीप्रोल 18.5 प्रतिशत एस.सी. 3 मि.ली./10 लीटर का करें जिससे फली छेदक कीटों की रोकथाम की जा सके।

अरहर की अति शीघ्र पकने वाली अर्धबौनी प्रजाति : पूसा अरहर 16

अति शीघ्र परिपक्वता 120 दिन

समकालिक पकना

सघन व अर्ध ऊर्ध्व शीर्ष पौधा

अर्धबौनी : 92 से.मी.

बीज का स्त्रोत : भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक), दूरभाषः 011–25841670, बीज उत्पादन इकाई, दूरभाषः 011–25842686, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रिय केन्द्र, करनाल, दूरभाषः 0184–2267166

जैविक कीटनाशकों के प्रयोग द्वारा कृषि रक्षा प्रबन्धन

विनय कुमारी कालिया[1], अभिषेक यादव[2] एवं हरीश कुमार[3]
कीट विज्ञान संभाग[1,2] एवम एटिक[3]
भा.कृ.अनु.प. – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

फसलों को कीटों, रोगों एवं खरपतवारों आदि से प्रतिवर्ष 7 से 25 प्रतिशत तक क्षति होती है, जिसमें 33 प्रतिशत खरपतवारों द्वारा, 26 प्रतिशत रोगों द्वारा, 20 प्रतिशत कीटों द्वारा, 7 प्रतिशत भण्डारण, 6 प्रतिशत चूहों द्वारा तथा 8 प्रतिशत अन्य कारण सम्मिलित हैं। फसलों, फलों एवं सब्जियों पर इनके प्रकोप को कम करने के उद्देश्य से कृषकों द्वारा कृषि रक्षा रसायनों का प्रयोग किया जा रहा है।

प्रदेश में कीटनाशकों की औसत खपत 279.60 ग्राम प्रति हेक्टेयर हैं, जो देश के औसत खपत 288 ग्राम प्रति हेक्टेयर से कम है। इस औसत खपत में 58.7 प्रतिशत कीटनाशक, 16.0 प्रतिशत रोगनाशक तथा 3.3 प्रतिशत चूहा विनाशक/धूम्रक सम्मिलित है। इन रसायनों का प्रयोग करने से जहाँ कीटों, रोगों एवं खरपतवारों में सहनशक्ति पैदा होती है और कीटों के प्राकृतिक शत्रु (मित्र कीट) प्रभावित होते हैं, वहीं कीटनाशकों का अवशेष खाद्य पदार्थों, मिट्टी, पानी, एवं वायु को प्रदूषित करने लगते हैं। कीटनाशक रसायनों के हानिकारक प्रभावों से बचने के लिए जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है।

जैविक एजेन्ट एवं जैविक कीटनाशक

जैविक एजेन्ट तथा जैविक कीटनाशक जीवों यथा कीटों, फफूदों, जीवाणुओं एवं वनस्पतियों पर आधारित उत्पाद हैं, जो फसलों, सब्जियों एवं फलों को कीटों एवं व्याधियों से सुरक्षित कर उत्पादन बढ़ाने में सहयोग करते हैं। ये जैविक एजेन्ट/जैविक कीटनाशक 20–30 दिनों के अंदर भूमि एवं जल से मिलकर जैविक क्रिया का अंग बन जाते है तथा स्वास्थ्य एवं पर्यावरण को कोई भी हानि नहीं पहुंचाते हैं।

जैविक कीटनाशकों से लाभ

- जीवों एवं वनस्पतियों पर आधारित उत्पाद होने के कारण, जैविक कीटनाशक लगभग एक माह में भूमि में मिलकर अपघटित हो जाते है तथा इनका कोई अंश अवशेष नहीं रहता। यही कारण है कि इन्हें पारिस्थितकीय मित्र के रूप में जाना जाता है।
- जैविक कीटनाशक केवल लक्षित कीटों एवं बीमारियों को मारते हैं, जब कि रासायनिक कीटनाशकों से मित्र कीट भी नष्ट हो जाते हैं।
- जैविक कीटनाशकों के प्रयोग से कीटों/व्याधियों में सहनशीलता एवं प्रतिरोध नहीं उत्पन्न होता जबकि अनेक रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से कीटों में प्रतिरोध क्षमता उत्पन्न होती जा रही है, जिनके कारण उनका प्रयोग अनुपयोगी होता जा रहा है।
- जैविक कीटनाशकों के प्रयोग से कीटों के जैविक स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं होता जब कि रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से ऐसे लक्षण परिलक्षित हुए हैं।
- जैविक कीटनाशकों के प्रयोग के तुरन्त बाद फलियों, फलों, सब्जियों की कटाई कर प्रयोग में लाया जा सकता है, जबकि रासायनिक कीटनाशकों के अवशिष्ट प्रभाव को कम करने के लिए कुछ दिनों की प्रतीक्षा करनी पड़ती है।
- जैविक कीटनाशकों के सुरक्षित, हानिरहित तथा पारिस्थितकीय मित्र होने के कारण विश्व में इनके प्रयोग से उत्पादित चाय, कपास, फल, सब्जियों, तम्बाकू तथा खाद्यान्नों, दलहन एवं तिलहन की मांग एवं मूल्यों में वृद्धि हो रही है, जिसका परिणाम यह है कि कृषकों को उनके उत्पादों का अधिक मूल्य मिल रहा है। जैविक कीटनाशकों के विषहीन एवं हानिरहित होने के कारण ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में इनके प्रयोग से आत्महत्या की सम्भावना शून्य हो गयी है, जबकि कीटनाशी रसायनों से अनेक आत्म हत्याएं हो रही है। जैविक कीटनाशक पर्यावरण, मनुष्य एवं पशुओं

के लिए सुरक्षित तथा हानिरहित हैं। इनके प्रयोग से जैविक खेती को बढ़ावा मिलता है जो पर्यावरण एवं परिस्थितकीय का संतुलन बनाये रखने में सहायक हैं।

मुख्य जैविक एजेन्ट

1. ट्राइकोडर्मा

ट्राइकोडर्मा एक घुलनशील जैविक फफूँदीनाशक है जो *ट्राइकोडर्मा विरिडी* या *ट्राइकोडर्मा हरजिएनम* पर आधारित है। ट्राइकोडर्मा फसलों में जड़ तथा तना गलन/सड़न, उकठा (*फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम, स्क्लेरोशिया डायलेक्टेमिया*) जो फफूंद जनित है, के नियंत्रण हेतु लाभप्रद पाया गया है। धान, गेहूं, दलहनी फसलें, गन्ना, कपास, सब्जियों, फलों एवं फल वृक्षों पर रोगों से यह प्रभावकारी रोकथाम करता है।

ट्राइकोडर्मा के कवक तन्तु फसल के नुकसानदायक फफूँदी के कवक तन्तुओं को लपेट कर या सीधे अन्दर घुसकर उनका रस चूस लेते है। इसके अतिरिक्त भोजन स्पर्धा के द्वारा कुछ ऐसे विषाक्त पदार्थ का स्राव करते हैं जो बीजों के चारों ओर सुरक्षा दीवार बनाकर हानिकारक फफूंदों से सुरक्षा देते हैं। ट्राइकोडर्मा से बीजों में अंकुरण अच्छा होकर फसलें फफूंद जनित रोगों से मुक्त रहती हैं एवं उनकी नर्सरी से ही वृद्धि अच्छी होती है।

ट्राइकोडर्मा का प्रयोग निम्न रूप से किया जाना उपयोगी है:–

- कन्द/कॉर्म/राइजोम/नर्सरी पौध का उपचार 5 ग्राम ट्राइकोडर्मा को एक लीटर पानी में घोल बनाकर डुबोकर करना चाहिए तत्पश्चात् बुवाई/रोपाई की जाय।
- बीज उपचार हेतु 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति किलोग्राम बीज में सूखा मिला कर बुवाई की जाय।
- भूमि शोधन हेतु एक किलोग्राम ट्राइकोडर्मा को 25 किलोग्राम गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर एक सप्ताह तक छाया में सुखाने के उपरान्त बुवाई के पूर्व प्रति एकड़ में प्रयोग किया जायें।
- खड़ी फसल में फफूंदजनित रोग के नियंत्रण हेतु 2.5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से 400–500 लीटर पानी में घोलकर सायंकाल छिड़काव करें। जिससे आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर दोहराया जा सकता है।

यह एक जैविक उत्पाद है किन्तु खुले घावों, श्वसन तंत्र एवं आंखों के लिए नुकसानदायक है। अतः इसके प्रयोग समय सावधानियां बरतनी चाहिए। इसके प्रयोग से पहले या बाद में किसी रासायनिक फफूँदनाशक का प्रयोग न किया जाये।

2. एन.पी.वी (न्यूक्लियर पॉलीहेड्रासिस वायरस)

न्यूक्लियर पॉलीहेड्रासिस वायरस (एन.पी.वी.) पर आधारित हरी सूंड़ी (*हेलिकोवर्पा आर्मीज़ेरा*) अथवा तम्बाकू सूंड़ी (*स्पोडाप्टेरा लिटूरा*) का जैविक कीटनाशक है जो तरल रूप में उपलब्ध है। इसमें वायरस कण होते हैं जिनसे सूंडी द्वारा खाने या सम्पक्र में आने पर सूंडियों का शरीर 2 से 4 दिन के भीतर गाढ़ा भूरा फूला हुआ व सड़ा हो जाता है, सफेद तरल पदार्थ निकलता है व मृत्यु हो जाती है। रोग ग्रसित तथा मरी हुई सूंडियां पत्तियों एवं टहनियों पर लटकी हुई पाई जाती हैं।

एन.पी.वी. कपास, फूलगोभी, टमाटर, मिर्च, भिण्डी, मटर, मूंगफली, सूर्यमुखी, अरहर, चना, मोटा अनाज, तम्बाकू एवं फूलों को नुकसान से बचाता है। प्रयोग करने से पूर्व 1 मिली. एन.पी.वी. को 1 लीटर पानी में घोल बनाये तथा ऐसे घोल को 250 से 500 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से 12 से 15 दिनों के अंतराल पर 2 से 3 छिड़काव फसलों के लिए उपयोगी हैं। छिड़काव सांयकाल को किया जाय तथा ध्यान रहे कि लार्वा की प्रारम्भिक शैषवावस्था में अथवा अंडा देने की स्थिति में प्रथम छिड़काव किया जाय। एन.पी.वी. की सेल्फ लाइफ एक माह है।

3. *ब्यूवेरिया बैसियाना*

यह एक फफूंदी जनित उत्पाद है, जो विभिन्न प्रकार के फुदकों को नियंत्रित करता है। यह लेपीडोप्टेरा कुल के कैटरपिलर, जिसमें फली छेदक (हेलियोथिस), स्पोडाप्टेरा, तथा बाल वाले कैटरपिलर सम्मिलित हैं, पर प्रभावी है तथा छिड़काव होने पर उनमें बीमारी पैदा कर देता है व कीट

निष्क्रिय होकर मर जाते हैं। यह विभिन्न प्रकार के फसलों फलों एवं सब्जियों में लगने वाले फली बेधक पत्ती लपेटक, पत्ती खाने वाले कीट, भूमि में दीमक एवं सफेद गीडार आदि की रोकथाम के लिए लाभकारी है।

प्रयोग विधि

- भूमि शोधन हेतु *ब्यूवेरिया बैसियान* की 2.5 किग्रा० प्रति हे. लगभग 25 किग्रा. गोबर की खाद् में मिलाकर अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिये।
- खड़ी फसल में कीट नियंत्रण हेतु 2.5 किग्रा. प्रति है. की दर से 400–500 लीटर पानी में घोलकर सायंकाल में छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर दोहराया जा सकता है।

4. स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स

यह जीवाणु चने की फसल में उपयोगी पाया गया है। यह जीवाणु पौधों में लगने वाले तीन रोगकारक कवकों, *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* प्रजाति साइसेरी, राइजोक्टोनिया व पिथियम को रोकने में सक्षम हैं।

प्रयोग करने की विधि

बीज उपचार

500 ग्राम सूखी गोबर की खाद को 2.5 लीटर पानी में डालकर गाढ़ा घोल (स्लरी) बनाने के बाद 500 ग्राम स्यूडोमोनास को डाल कर इस गाढ़े घोल में पौधों की जड़ को डुबो कर उपचारित करने के उपरान्त लगाना चाहिए। इस प्रकार के उपचारकण अधिकांशतः सब्जियों वाली फसलों यथा फूलगोभी, टमाटर बैंगन, मिर्च व प्याज मे तथा धान की पौधों की जड़ों पर करना चाहिए।

मृदा उपचार

स्यूडोमोनास के संवर्धन की 800 ग्राम मात्रा विभिन्न फसलों के अनुसार 10–20 किग्रा० महीन पिसी हुई मृदा या बालू में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से खेतों में फसलों की बुवाई के पूर्व उर्वरकां की तरह छिड़काव करना लाभप्रद होता है।

6. क्राइसोपर्ला

क्राइसोपर्ला नामक हरे कीट जिनकी लम्बाई 1 से 1.3 सेमी., पंख लम्बे हल्के रंग के पारदर्शी, सुनहरी आंखे तथा 5 एन्टिना धारक होते है। क्राइसोपर्ला के लार्वा सफेद मक्खी, माहूँ जैसिड थ्रिप्स आदि के अंडो तथा लार्वा को खा जाते है, को प्रभावित खेतों में डाला जाता है।

क्राइसोपर्ला के अंडों को कोरसियरा के अंडों के साथ लकड़ी के बुरादे के बाक्स में आपूर्ति किया जाता है। इनके लार्वा कोरसियरा के अंडो को खाकर वयस्क बनते है। विभिन्न फसलों में क्राइसोपर्ला के 50000 से 100000 लार्वा या 500 से 1000 वयस्क प्रति हेक्टेयर डालने से कीटो का नियंत्रण भली प्रकार से होता है। सामान्यतः दो बार इन्हें छोड़ना चाहिए।

क्राइसोपर्ला के अंडों को 10 से 15 डिग्री सेंटिग्रेड पर रेफ्रीजेरेटर में 15 दिनों तक रखा जा सकता है। सामान्य तापमान पर इनका जीवन चक्र प्रारम्भ हो जाता है।

7. एजाडिरेक्टिन (नीम का तेल)

यह नीम के बीच एवं गूदा के तत्वों पर आधारित तरल वानस्पतिक कीटनाशक है। इसकी गंध एवं स्वाद कीड़ों को भगाती है, खाने की अनिच्छा उत्पन्न करती है एवं जीवन चक्र को धीमा एवं प्रजननशीलता को कमजोर बनाकर अंडे तथा बच्चों की संख्या में कमी लाती है।

नीम का घोल पत्ती खाने वाले कीट रस चूसने वाले फल मक्खी, सफेद मक्खी आदि से सुरक्षा प्रदान करता हैं। इसके छिड़काव के कारण कीट के बढ़ने की क्षमता कम हो जाती है, वह एक अवस्था से दूसरी अवस्था में नहीं जा पाते, कीटों की अंडे देने की क्षमता कम हो जाती है। नीम के तेल की 2 लीटर प्रति. है0 मात्रा टिड्डी की संख्या को कम कर देती हैं। नीम की पत्तियॉ या घोल भंडारण में लगने वाले अनेक कीटों के प्रति प्रभावी हैं।

8. बी. टी. (*बेसिलस थ्यूरिजिएन्सिस*)

5 प्रतिशत डब्लू.पी. बी.टी. एक बैक्टिरिया आधारित जैविक कीटनाशक है जो सूंडियों पर तत्काल प्रभाव डालता

है। इससे सूंड़ियों पर लकवा, आंतों का फटना, भूखापन तथा संक्रमण होता है तथा वे दो से तीन दिन में मर जाती हैं। यह पाउडर एवं तरल दोनों रूपों में उपलब्ध है। इसका प्रयोग मटर, चना, कपास, अरहर, मूंगफली, सुरजमुखी, धान फूलगोभी, पत्ता गोभी, टमाटर, बैंगन, मिर्च तथा भिण्डी में उपयोगी एवं प्रभावशाली है।

बी.टी. का प्रयोग छिड़काव द्वारा किया जाता है। प्रति हेक्टेयर 0.5 से 1.0 किग्रा० मात्रा को 500 से 700 लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अंतराल पर दो से तीन बार छिड़काव लाभकारी है।

9. फेरोमोन ट्रैप (गंध पाश)

फेरोमोन ट्रैप फसलों को नुकसान करने वाली सूंडियों के नर पतंगों के फंसाने के लिए चमकीले प्लास्टिक का बना होता है। इसमें कीप के आकार के मुख्य भाग पर लगे ढक्कन के मध्य में मादा कीट की गंध (ल्यूर) लगाया जाता है, जो नर पतंगों को आकर्षित करता है। कीप के निचले भाग पर पालीथीन की थैली लगायी जाती है, जिसमें पतंगे जाते है। थैली के निचले मुख पर से रबर बैंड हटाकर फंसे पतंगे निकाल कर मार दिये जाते है।

फेरोमोन ट्रैप को खेत में पतंगों की उपस्थिति पता करने के लिए 5–6 ट्रैप प्रति हेक्टेयर की दर से तथा अधिक संख्या में पकड़ने के लिए 15 से 20 ट्रैप प्रति हेक्टेयर की दर से लगाये जाते है।

ल्यूर (गंध रबर) में गंधक रहित रबर पर मादा पतंगों की विशेष गंध (फेरोमोन) भरी होती है। विभिन्न प्रकार के पतंगों के लिए अलग–अलग ल्यूर उपयोग किये जाते है। ल्यूर थैली में बंद मिलता है। जिसे खोल कर ट्रैप के ढक्कन में बने स्थान पर लगाया जाता है। कपास, चना, अरहर, टमाटर, गोभी, बन्दगोभी, मूंग, उर्द, भिण्डी तथा धान के लिए विभिन्न प्रकार के ल्यूर का प्रयोग करते हुए फेरोमोन ट्रैप लगाये जाते है। ल्यूर 3–4 सप्ताह तक कार्य करता है।

10. जैविक एजेन्ट कीटनाशक की उपलब्धता

प्रदेश में जैविक एजेन्ट–ट्राइकोकार्ड, ट्राइकोडर्मा तथा एन.पी.वी. का उत्पादन कृषि विभाग की नौ आई. पी.एम. प्रयोगशालाओं हरदोई, आजमगढ़, वाराणसी, उरई (जालौन), बरेली, मथुरा, मुरादाबाद, सैनी (कौशाम्बी) एवं कैराना (मुजफ्फरनगर), कृषि विश्वविद्यालयों की तीन प्रयोगशालाओं कानपुर, मोदीपुरम (मेरठ) एवं फैजाबाद तथा भारत सरकार की दो प्रयोगशालाओं लखनऊ एवं गोरखपुर में किया जा रहा है। क्राइसोपर्ला का उत्पादन कृषि विश्वविद्यालय, मेरठ की प्रयोगशाला में हो रहा है। इसी प्रकार जैविक एजेन्ट एवं जैविक कीटनाशकों का उत्पादन/विक्रय प्रदेश में अनेक फर्मो द्वारा भी किया जा रहा है। इनकी उपलब्धता में कठिनाई नहीं है।

इस प्रकार जैविक एजेन्ट एवं जैविक कीटनाशकों के प्रयोग से शुद्ध एवं मितव्ययी तथा अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है तथा स्वस्थ पर्यावरण में कृषि का सतत् विकास सुनिश्चित हो सकता है।

भूमि शोधन				
क्र०सं०	कीट का नाम	प्रभावित फसल	रोकथाम	मात्रा/हे०
1	दीमक	समस्त फसल	ब्यूवेरिया बैसियाना दानेदार कीटनाशी	2.5 किग्रा० 10–20 किग्रा०
2	सफेद गिडार	समस्त फसल	ब्यूवेरिया बैसियाना दानेदार कीटनाशी	2.5 किग्रा०
3	कद्दू का लालकीट	कद्दू वर्गीय सब्जियां	क्लोरोपायरीफास 20% ई०सी० अथवा ब्यूवेरिया बैसियाना अथवा मेटाराइजियम	2.5 लीटर
4.	अर्ली सूट बोरर	गन्ना	दानेदार कीटनाशी	10–20 किग्रा०/ 2.5 किग्रा०
5.	लेपीडोप्टेरस कीट	खरीफ की फसल	दानेदार कीटनाशी समस्त फसल ब्यूवेरिया बैसियाना अथवा मेटाराइजियम	10–20 किग्रा० 2.5 किग्रा० अथवा 2.5 किग्रा०/500 मिली०

6.	मिलीबग	भिण्डी कपास	ब्यूवेरिया बैसियाना आम लरहल अथवा मेटाराइजियम	2.5 किग्रा०
भूमिजनित रोग				
1	खैरा	धान	जिंक सल्फेट	20–25 किग्रा०
2	जीवाणु झुलसा/ पत्तीधारी रोग	धान	स्यूडामोनास	2.5 किग्रा०
3	फाल्स स्मट/शीथ ब्लाइट	धान	ट्राईकोडरमा अथवा स्यूडोमोनास	2.5 किग्रा०/250–300 ली. पानी में
4	बैक्टीरियल विल्ट	दलहनी तिलहनी	स्यूडामोनास	2.5 किग्रा०/250–300 ली. पानी में
5	डैमपिंग ऑफ डाउनी मिल्ड्यू	सब्जियां	ट्राईकोडरमा अथवा स्यूडोमोनास	2.5 किग्रा०/ 250–300 ली. पानी में

पॉलीहाउस में सूत्रकृमि रोग : एक गंभीर समस्या

पंकज, हरेन्द्र कुमार एवं सोनी देवी
सूत्रकृमि विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

पॉलीहाउस में फसलों का उत्पादन करना एक नवीनतम बहुत उपयोगी तकनीकी है। यह फसल पैदावार की खास प्रणाली है। पॉलीघर के निर्माण के लिये भारत सरकार भी इसे बढ़ावा दे रही है। पॉलीघर में खीरा, टमाटर, चैरी टमाटर, करेला व शिमला मिर्च (लाल, हरी, पीली) सब्जियाँ आदि और कटफ्लावर में गुलाब, जरवेरा, ग्लाइडोलस, रजनीगन्धा व गुलदाउदी आदि सब की पैदावार ले सकते हैं। यह प्रणाली किसानों द्वारा अधिक तेजी से अपनाई जा रही है। क्योंकि पॉलीघर में फसलों पर कीटपतंगों, विभिन्न रोगों व मौसम का प्रकोप कम होता है, जिससे–कीटनाशी/रोगनाशी का प्रयोग कम करते हैं। इसी कारण पॉलीघर में उगाई सब्जियाँ साफ–सुथरी व आर्गेनिक सब्जियों की श्रेणी में आती है और बाजार में अन्य सब्जियों की अपेक्षा ऊँची दर पर बिकती हैं व प्रति वर्गमीटर फसल पैदावार अधिक होती है। पॉलीघर में बिना मौसम की सब्जियाँ उगाकर व बाजार में ऊँची दर पर बेचकर और कम क्षेत्र में अधिक उत्पादन करके अधिक लाभ कमा सकते हैं।

पूसा संस्थान में विभिन्न प्रकार के पॉलीघर बनाये गये हैं, जोकि कम व ज्यादा ऊर्जा के इस्तेमाल द्वारा विभिन्न उद्देश्यों के लिये है जैसेः–

- किसानों के लिये विभिन्न प्रकार की फसल प्रदर्शन करना।
- किसानों को फसल व नर्सरी उगाने की नई–नई तकनीकों का प्रशिक्षण देना।
- इसमें ड्रिप पद्यति सिंचाई कर आर्द्रता को नियंत्रित किया जाता है । जिससे कृत्रिम खेती सम्भव हो पाती है।

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग द्वारा कई वर्षों से पॉलीघर प्रणाली में फसलों पर शोध कार्य चल रहा है, इससे ज्ञात

सूत्रकृमि

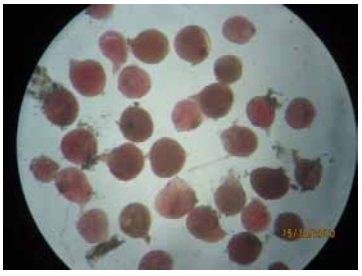

जड़–गाँठ सूत्रकृमि (मेलायडोगाइन)

शिमला

मिच टमाटर

जरबेरा

हुआ है कि टमाटर, खीरा में जड़–गाँठ सूत्रकृमि एक जटिल समस्या है। पॉलीघर में सूत्रकृमि की समस्या के समाधान के लिये कई प्रकार की नियन्त्रण प्रणालियों का उपयोग करना सम्भव नहीं है, क्योंकि पॉलीघर में अच्छी फसल उगाने के लिये बनावटी वातावरण (तापमान व नमी) बनाकर रखना होता है व ड्रीप सिंचाई प्रणाली अपनाते हैं जो सूत्रकृमि के जीवन चक्र बढ़ने में लाभकारी है अर्थात् सूत्रकृमि की संख्या में लगातार वृद्धि होने से 80–100 लार्वा प्रति ग्राम मिट्टी में बनकर पौधों के लिये अधिक नुकसान देय बन जाते हैं। पॉलीघर में फसल उत्पाद समय ज्यादा

लम्बा होता है, जैसे–टमाटर की फसल 8–9 महीने तक चलती है, जिससे सूत्रकृमि की संख्या लगातार बढ़ती रहती है, जिससे फसल में रोग के लक्षण दिखने लगते हैं।

सूत्रकृमियों द्वारा फसलों में हानिः

पादप सूत्रकृमि प्रतिवर्ष पूरे संसार के फसल उत्पादन में 10 से 15 प्रतिशत तक हानि करते हैं। जिसका औसतन मूल्यांकन 2000 करोड़ रूपये तक हो सकता है। इससे फसल पैदावार की हानि का प्रभाव किसान के साथ–साथ अपने देश की आर्थिक स्थिति पर भी पड़ता है। परन्तु कुछ फसलें– गेहँ, धान व सब्जियों में सूत्रकृमि का ज्यादा प्रकोप होने से फसल उत्पादन में 20 से 50 प्रतिशत तक की हानि होती है। सभी प्रकार की फसलों का उत्पादन ठीक रखने व आर्थिक नुकसान कम करने के लिए पादप परजीवी सूत्रकृमि का उचित प्रबन्धन करना अति आवश्यक है।

सूत्रकृमि बहुत ही छोटे होते हैं जो कि मिट्टी में अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। सूत्रकृमि, धागे की तरह के पादप परजीवी सूक्ष्मजीव होते हैं जो फसलों की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहकर पौधों के भोजन पर ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं।

''देखने में छोटन लगे घाव करे गम्भीर''

सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में घाव उत्पन्न करके नई प्रकार की कोशिकायें बनाते हैं जिससे पौधों में खाद्य पदार्थ, पानी व लवण सोखना व उनका वितरण प्रभावित होता है। इसी कारण फसल में खाद्य पदार्थ की कमी के लक्षण उत्पन्न होते हैं और दिन के समय में पौधे मुरझाये से नजर आते हैं। इस प्रकार के लक्षण फसल में खाद व पानी डालकर भी ठीक नहीं किये जा सकते। इस प्रकार सूत्रकृमि पौधों में रोग उत्पन्न करके फसल को भारी क्षति पहुंचाते हैं जिसके परिणाम स्वरूप पैदावार भी कम हो जाती है। यह सूत्रकृमि 30 दिन में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं। सूत्रकृमि जड़ों में अन्दर घुसकर पौधे पर परजीवी रहकर भोजन चूसते रहते हैं और जड़ों की कोशिकाओं को क्षति पहुँचाकर व प्रजनन करके एक मादा सूत्रकृमि जड़ों के अन्दर जिलेटीन जैली में अण्डें देकर अपना जीवन चक्र पूरा करती है।

लक्षण

पौधों के उपरी भाग के लक्षणः– पौधे के उपरी भाग का मुरझाना व पीलापन, पत्तियों का मुड़ना, सूखापन, पौधों का बौनापन व फल, फूल और कली का कम आना व पीली पड़कर झड़ जाना आदि ।

पौधों के निचले भाग के लक्षणः– रोगी पौधों की जड़ों में अत्याधिक फुटाव, जड़ें पतली, गुच्छेदार व छोटी रहना और जड़ों का फूलकर मोटी हो जाना आदि प्रमुख लक्षण हैं । खीरे की फसल में भी उपरोक्त लक्षण पाये जाते हैं। शिमला मिर्च भी इस सूत्रकृमि से प्रभावित होती है। अतः पॉलीघर में जड़–गाँठ सूत्रकृमि की संख्या अधिक होने पर टमाटर व खीरा के पौधे मर भी जाते हैं। जिससे किसान को भारी हानि होती है। सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में छोटी –बड़ी गाँठे बनाते हैं जो जीवाणुओं द्वारा बनाई गाठों की अपेक्षा कठोर होती है। जड़–गाँठ रोगी पौधों की जड़ों पर मिट्टी की फफूंद आक्रमण कर जड़ों को गला–सड़ा देती है। जिससे पौधे सूखकर मर जाते हैं।

फसल कटने के उपरान्त सूत्रकृमि जमीन की गहराई में जाकर जीवित रह जाते हैं और फसल बोने पर दोबारा पौधों को हानि पहुंचाते हैं।

पॉलीघर में सूत्रकृमि नियन्त्रण के लिये सामान्य कीटनाशी की सिफारिश की जाती है, परन्तु पॉलीघर में कम प्रभावी सिद्ध हुआ है । इसलिये गैस उत्पन्न करने वाली रसायनों का प्रयोग सूत्रकृमि नियन्त्रण में ज्यादा सफल रहा है, क्योंकि गैस मिट्टी के कण–कण में पहुंचकर छिपे कृमियों, कीड़े व अण्डों को मार देती है। अतः पॉलीघर में पादप परजीवी सूत्रकृमि की रोकथाम में गैस वाले रसायन (फयुमिगेन्ट) ज्यादा प्रभावी सिद्ध हुए हैं।

सूत्रकृमियों के नियन्त्रण के लिये कई वर्षों से पॉलीघर में प्रयोग किये जा रहे हैं। इनमें मिथाम सोडियम (बेपाम) कृमिनाशी/कीटनाशी 300 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में 30 से.मी. गहरी व 15 से.मी. चौड़ी एक मीटर के अन्तराल पर नालियाँ बनाकर कृमिनाशी डालें। कृमिनाशी नालियाँ डालें। कृमिनाशी डालने के तुरन्त बाद नालियों में मिट्टी भर दें व साथ–साथ सिंचाई करके पॉलीथिन से 15

दिन के लिये ढ़क दें। पॉलीथिन के किनारे चारों तरफ से मिट्टी से दबा दें, जिससे गैस बाहर न निकल पायें। 15 दिन के बाद पॉलीथिन हटाकर 15 दिन के लिये खुला छोड़ दें व हल्की गुड़ाई कर दें ताकि गैस बाहर निकल जायें व इसकें बाद पौध रोपाई कर दें। पॉलीघर में सूत्रकृमि की रोकथाम के लिये मिथाम सोडियम ज्यादा प्रभावी है व फलों की संख्या व आकार में 25–30 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। कीटनाशक रसायन का इस्तेमाल मिट्टी की सतह पर न करके यदि मिट्टी की गहराई में किया जाये तो ज्यादा लाभकारी रहेगा।

पौधों के उपरी भाग के लक्षण **पौधों के निचले भाग के लक्षण**

टमाटर

शिमला मिर्च

खीरा जरबेरा

नर्सरी उपचारः पॉलीघर उपचार के बाद स्वस्थ नर्सरी पौध लगाना आवश्यक है, जिससे सूत्रकृमि नियन्त्रण रहेगा, इसलिये टमाटर, मिर्च, खीरा, करेला की नर्सरी लगाने से पहले कार्बोफ्यूरान–3जी, 3.5 ग्राम प्रति मी0 के हिसाब से नर्सरी की क्यारी में छिड़क कर मिट्टी में मिला दें, बाद में बीज बोयें। इससे सूत्रकृमि रहित स्वस्थ नर्सरी पैदा होगी। मृदा सौरीकरण विधि से मृदा का उपचार कर नर्सरी विकसित करके कुछ हद तक निजात पा सकते हैं ।

पौध उपचारः– बिना उपचारित नर्सरी के पौधों की जड़ों को कार्बोस्लफान 25 ई.सी.(मार्सल) 100पी.पी.एम. (2.5 मि. ली. प्रति 10 लिटर पानी) के घोल में 15–20 मिनट डूबोकर

रखें व बाद में पालीघर/खेत में रोप दें, इससे फसल में सूत्रकृमि हानि नहीं पहुंचायेगा ।

पॉलीघर में सूत्रकृमि की संख्या को नियन्त्रित करने में मिथाम सोडियम (वेपाम) बहुत ही प्रभावी है । लेकिन कुछ और आसान व सहज विधियाँ सूत्रकृमि प्रबन्धन हेतु इस प्रकार हैः–

टमाटर की पौध का उपचार

1. ट्रेप फसलः– सूत्रकृमि आकर्षित करने वाली फसल जैसे–भिण्डी को एक महीने के लिये पॉलीघर में उगाये व जड़ सहित उखाड़ कर नष्ट कर दें।
2. नीम की निबोली, पत्तियों का पाउडर बनाकर फसल बुवाई से पहले 500 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से डालें।
3. सनई व सरसों के पौधों को टुकड़ों में काटकर फसल बुवाई से 10–15 दिन पहले जुताई करके मिट्टी में दबा दें।
4. समय–समय पर रोग अवरोधी किस्मों की बुवाई करें ।

सनई

5. जैविक खाद जैसे ट्राइकोडर्मा व सुडोमोनास 5–10 किग्रा. एक टन गोबर की सड़ी खाद में अच्छी तरह मिलाकर रख दें व एक महीने बाद सूत्रकृमि ग्रसित क्षेत्र में 200–300 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से मिट्टी में मिलायें।
6. कार्बोफ्यूरान 100 किलो प्रति हेक्टेयर बुवाई के समय पर मिट्टी में मिलायें।
7. पौध/नर्सरी सूत्रकृमि रहित लेने के लिये मिट्टी की जांच कराये सूत्रकृमि की उपस्थिति जानने के लिये यदि मिट्टी में सूत्रकृमि है तो कार्बोफ्युरान 3.5 ग्राम प्रति वर्गमीटर के हिसाब से नर्सरी की क्यारी में मिलाकर बीज बुवाई करें।

उपरोक्त विधियों में से 2–3 विधियाँ अपनाकर सूत्रकृमि की संख्या को कम किया जा सकता है, जो सामाजिक, आर्थिक व पर्यावरण की दृष्टि से अच्छा रहेगा व फसल उत्पादन में बचत/हानि का अनुपात भी ठीक रहेगा।

कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती

सेल्वाकुमार आर, मुकुल कुमार, जूगेन्दर कुमार एवं अनिल कुमार
संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली
कृषि विज्ञानं केंद्र, रायसेन, मध्य प्रदेश

उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में कद्दूवर्गीय सब्जियों को ग्रीष्मऋतु या वर्षा के मौसम में उगाया जाता है। लेकिन इन सब्जियों का एकसाथ बाजार में पहुँचना बाजार भाव को प्रभावित करता है और पैदावार का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। उत्तरी भारत के कुछ भागों में इन कद्दूवर्गीय सब्जियों को अगेती लगाने हेतु नदियों के आस–पास नालियां बनाकर लगाया जाताहै। लेकिन या तो इस तरह के क्षेत्र बहुत कम है या पूरी तरह से कद्दूवर्गीय सब्जियों को अगेती नहीं किया जाता है। अतः इस समस्या से निजात पाने के लिए हम कद्दूवर्गीय सब्जियों को अगेती या बेमौसम उगाने के लिए लो–टनल का इस्तेमाल करते हैं। जिसकी सहायता से किसान को उसकी पैदावार का उचित बाजार मूल्य मिल सके।

लो–टनलः

यह 1–2 माह तक के लिए सब्जियों के ऊपर बनाई जाने वाली अस्थाई सरंचना होती है क्योंकि यह बनने के बाद देखने सुरंग की तरह लगती है इसलिए इस सरंचना को टनल कहते है।

इस लो–टनल की सहायता से कद्दूवर्गीय सब्जियों जैसे खरबूजा, ककड़ी, चप्पनकद्दू, चप्पनटिंडा, करेला, तोरी, व लौकी बेमौसमी या अगेती उगा सकते है। लो–टनल एक सुरंगनुमा आकृति दिखाई पड़ती है जोकि एकल बेडपर लगी सब्जी को पारदर्शी पॉलीथिन की शीट से ढक जाता है। जिससे पौधों की बढ़वार बहुत अच्छी होती है क्योंकि ठंडी के दिनों में पौधों के आसपास की हवा गर्म हो जाती है। इस लो–टनल की सहायता से मृदा का तापमान भी बढ़ जाता है और वर्षा, ओलावृष्टि, ठण्ड जैसी समस्या से निजात मिल जाती है और फसल को 40–50 दिन अगेती किया जा सकता है।

प्लास्टिक लो–टनल को बनाने में प्रति 1000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल पर 25–30 हजार रुपये की लगत आती है। इस तकनीक को अपनाने के लिए टपक सिंचाई लगाना आवशयक है।

कद्दूवर्गीय सब्जियों की किस्में व संकर प्रजातियाँ

चप्पनकद्दूः ऑस्ट्रेलियन ग्रीन, पैटीपेन, अर्ली येल्लो, पूसा अलंकार, प्रोलिफिक

चिकनी तोरीः पूसा सुप्रिया पूसा स्नेहा, पूसा चिकनी

धारीदार तोरीः पूसा नसदार , सतपुतिया , पूसा नूतन

करेलाः पूसा दोमौसमी, पूसा विशेष, पूसा हाइब्रिड–2

लौकीः पूसा नवीन, पूसा सन्देश, पूसा संतुष्टि, पूसा समृद्धि, पूसाहाइब्रिड–3

खीराः पोइंसेट, जापानीज लॉन्ग ग्रीन ,पूसा संयोग, पूसा उदय

खरबूजाः पूसा मधुरस, हरामधु, पंजाब सुनहरी, दुर्गा पुरमधु, लखनऊ सफेदा और पंजाब संकर.1

तरबूजः शुगरबेबी, असाहीयामोता, अर्काज्योति

पेठाः पूसा उज्जवल

बेमौसमी कद्दूवर्गीय सब्जियोँ की बुवाईः बेमौसमी कद्दूवर्गीय सब्जियोँ को उगाने केलिए उनकी पौध को ग्रीनहाउस पौधशाला में प्रो ट्रे के अंदर जिसमें 1.5 इंच के खाने बने हों में उगाया जाता है। इस सब्जियों के बीज को दिसम्बर के महींने में बोया जाता है और 28–30 दिन बाद वह रोपाई योग्य हो जाती है। जो किसान इन प्रो ट्रे में पौध नहीं उगा सकते तो वह बाँस की सहायता से झोपड़ीनुमा हाउस बनाकर उसके अंदर पॉलिथीन की थैलियां जिनका आकार 15X10 सेमी हो और 1:1:1 मिटटी, बालू और सड़ीगोबर की खाद का मिश्रण भरकर और जलनिकास हेतु छेद कर लिए जाते हैं। बीज को 1–15 इंच की गहराई पर लगाकर ऊपर से हल्की बालूकी परत डालकर फवारा से पानी देते हैं।

खेत की तैयारी व बैड बनानाः नवम्बर माह में 15–20 टन/है की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद तैयार खेत में मिलानी चाहिए तथा हैरो की सहायता से 2–3 बार जुताई करके छोड़ देना चाहिए।

बैड तैयार करना, पौध रोपाई व टनल बनानाः पौध रोपाई से पहले 1– 1.5 मी चौड़ी बैड तैयार कर लेते हैं तथा इस पर बूंद–बूंद सिंचाई हेतु एक ड्रिप पाईप को बैड के मध्य में बिछा देते हैं। और उसके ऊपर जंगरोधी लचीला तार जो 1.5–2.0 mm मोटाई का हो 1.5 से 2.5 मी की दूरी पर लगा देते है। इन तारों को लगाते समय इनकी चौड़ाई 40–60 सेमी रखते हैं और ऊंचाई भी 40–60 सेमी रखते हैं। अब तैयार कद्दूवर्गीय सब्जियों की पौध को 50–50 सेमी. की दूरी पर लगा देते हैं।

पौध लगाने के पश्चात इसके ऊपर 30 माइक्रॉन की बनी पारदर्शी पॉलिथीन को पौध रोपन के दिन ही ढक देते हैं। इस पालीथिन को लगाने के पश्चात उसी दिन या अगले दिन बेड से 30–35 सेमी की ऊंचाई पर 4–5 सेमी अर्ध चन्द्राकर काट लगाते है जो कि पूर्व की दिशा में करते है और इस कट की दूसरे कट से दूरी लगभग 2–3 मी रखते है।

उर्वरक व सिंचाईः इस विधि से पानी में घुलनशील उर्वरक ही टपक सिंचाई के माध्यम से देने चाहिए। अगर हम जनवरी के महीने में पौध को लगाते हैं तब 4.0 घन मी. पानी को 1000 वर्ग मी. क्षेत्रफल के लिए लेते हैं और 6–7 दिन के अंतराल पर इसके साथ ही साथ नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश (5:3:5) को 80–100 पीपीएम के घोल के रूम में पहले महीने में देते हैं। दूसरे महीने में 6 दिन के अंतराल पर 120–150 पीपीएम नाइट्रोजन, फॉस्फोरस पोटाश को देते हैं। इसके बाद जब फल बनना शुरू हो जाये तो उसके बाद 300 पीपीएम का घोल बनाकर हर 6–7 दिन के अंतराल से देते है। खाद व पानी की आवश्कयता फसल की बढ़वार व मिटटी उर्वरता पर भी निर्भर करती है।

टनल को हटाने का समयः फरवरी माह में जब तापमान बढ़ने लगे और पाला पड़ने का अंदेशा कम हो तब फरवरी के तीसरे पखवाड़े में टनल को हटाकर रख देना चाहिए। इस टनल में प्रयोग की गई पॉलिथीन को दो साल तक उपयोग में ला सकते हैं और इस में प्रयोग किये गए तारों को 20–25 साल तक इस्तेमाल किया जा सकता है।

कीट व बीमारी प्रबंधनः फरवरी के पहले सप्ताह में जब दिन के समय में धूप निकलनी शुरू हो जाती है तब टनल की पॉलीथीन को एक तरफ से हटाकर उस के ऊपर एक रासायनिक दवाई जैंसे रोगर, मेलाथियान या इमिडाक्लोरोप्रिड 1–2 मिली/ली पानी का स्प्रे करना चाहिए और शाम के समय उसको ढक देते हैं।

कद्दूवर्गीय सब्जियों में परागणः अधिकतम कद्दूवर्गीय सब्जियाँ एकलिंगी होती है अतः एकलिंगी सब्जियों मैं परागण की आवश्यकता होती है। इन कद्दूवर्गीय सब्जियों में परागण मधुमक्खियों के द्वारा होता है अतः परागण की क्रिया को सुचारू रूप से बनाये रखने के लिए खेत पर एक मधुमक्खियों की कॉलोनी का बॉक्स रख देते है जिसमें 30000– 50000 तक मधुमक्खियाँ होती हैंजो एक एकड़ क्षेत्रफल के लिए पर्याप्त होती है।

सब्जी की तुड़ाईः 15–20 फरवरी के आस–पास टनल को हटा देते है तब हम देखतें हैं कि पौधों पर फूल आता दिखाई देता है। जैसे ही टनल को हटाते है उसके तुरन्त बाद उस पर मक्खियाँ परागण करना शुरू कर देती है। और 10 –15 दिन बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते है। चप्पनकद्दू की तुड़ाई फरवरी के प्रथम सप्ताह से शुरू कर देते हैं।

कद्दूवर्गीय सब्जियाँ का रोपाई का समय, आय व्यय का अनुपातः

क्र. सं	फसल	रोपाई का समय	फल तुड़ाई का समय	आय व्यय का अनुपात
1.	चप्पन कद्दू	दिसम्बर माह का पहला पखवाड़ा	फरवरी माह का पहला पखवाड़ा	1:3.0 से 1:4.0
2.	करेला	जनवरी माह का तीसरा पखवाड़ा	अप्रैल माह का दूसरा पखवाड़ा	1:3.0 से 1:4.0
3.	लौकी	उपरोक्त	उपरोक्त	1:2.5 से 1:3.5
4.	खरबूजा	जनवरी माह का तीसरा पखवाड़ा	अप्रैल माह का दूसरा पखवाड़ा	1:2.5 से 1:3.5
5.	खीरा	उपरोक्त	उपरोक्त	1:3.0 से 1:4.0

मृदा उर्वरता बढ़ाने हेतु कम्पोस्ट खाद

रेनू आर्य एवं सोनम आर्य[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराइच
[1]कालेज आफ एप्लाइड एजूकेशन एवं हेल्थ साइन्स, मेरठ

आज के आधुनिक युग में बढ़ती जनसंख्या को अन्न उपलब्ध कराने के उददेश्य से अंधाधुंध एवं असंतुलित मात्रा में उर्वरकां का प्रयोग, अधिक सिंचाई एवं अधिक उर्वरक उपयोग वाली प्रजातियों का प्रयोग किया जा रहा है साथ ही साथ जीवांश्म वाली खादों का प्रयोग न के बराबर हो रहा है जिसके कारण मिटटी में कार्बन की मात्रा निरंतर घटती जा रही है और उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। इसलिए मृदा में कार्बन की मात्रा बढाने के लिए जीवांश्म खादों का प्रयोग आवश्यक है। जीवांश्म पदार्थ बढानें के लिए भूमि में नाडेप कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट एवं हरी खाद का प्रयोग करना चाहिए, जिसके बनाने की विधि निम्म प्रकार है–

नाडेप कम्पोस्टः

नाडेप कम्पोस्ट को महाराष्ट्र के किसान नारायण राव पांडे (नाडेप काका) ने विकसित किया है। इस विधि में कम्पोस्ट खाद जमीन की सतह पर टांका बनाकर उसमें प्रक्षेत्र अवशेष तथा बराबर मान्ना में खेत की मिटटी तथा गोबर को मिलाकर बनाया जाता है। इस विधि में 1 किलो गोबर से 30 किलो कम्पोस्ट बनाई जा सकती है।

नाडेप कम्पोस्ट का टांका उस स्थान पर बनाया जाये जहाँ की भूमि समतल हो तथा जल भराव से मुक्त हो। टांका के निर्माण हेतु आन्तरिक माप 10 फीट लम्बा, 6 फीट चौड़ा तथा 3 फीट गहरा रखना चाहिए। इस प्रकार टांका का आयतन 180 घन फीट होना चाहिए। टांका की दीवार 9 इंच मोटी होनी चाहिए। दीवार को बनाने में विशेष बात यह है कि बीच–बीच में यथा स्थान में छेद छोड़े जायें जिससे कि टांका में वायु का आवागमन बना रहे और खाद सामग्री आसानी से सड़ सके। प्रत्येक दो ईटों के बाद तीसरी ईट की जुड़ाई करते समय 7 ईंच के छेद छोड देना चाहिए। 3 फीट ऊंची दीवार में पहले, तीसरे, छठे और नवें रददे में छेद बनाने चाहिए। दीवार के भीतरी भाग को गाय अथवा भैंस के गोबर से लीप दिया जाता है फिर तैयार टांका को सूखने देना चाहिए। इस प्रकार बने टांका में नाडेप खाद बनाने के लिए मुख्य रुप से 4 चीजों की आवश्यकता होती है।

- ❖ अनुपयोगी फसल अवशेष तथा कचरा जैसे सूखे एवं हरे पत्ते, छिलके, डंठल, जडे, बारीक टहनियां तथा व्यर्थ के एवं सड़े गले खाद्य पदार्थ आदि। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि इन पदार्थों के साथ प्लास्टिक/पॉलीथिन, पत्थर तथा कांच आदि शामिल न हों। इस तरह कचरे की 1500 किलोग्राम मात्रा की आवश्यकता होती है।
- ❖ 100 किलोग्राम गाय अथवा भैंस का गोबर अथवा गोबर गैस संयत्र से निकले गोबर का घोल।
- ❖ सूखी महीन छनी हुई तालाब अथवा नाले की 1750 किलोग्राम मिटटी। गाय अथवा बैल के बांधने के स्थान की मिटटी अति उत्तम रहेगी।
- ❖ लगभग 1500 से 2000 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। गौमूत्र अथवा पशु मूत्र मिला देने से खाद की गुणवत्ता में बढोत्तरी होगी।

टांका भरने की प्रक्रिया एक दिन में ही समाप्त हो जाये। इसके लिए आवश्यक है कि कम से कम दो टैंकों का निर्माण किया जाये जिससे कि सभी सामग्री इकटठा होने पर एक ही दिन में टैंक भरने की प्रक्रिया पूरी हो सके। टैंक भरने का क्रम निम्न प्रकार हैः

पहली परत – व्यर्थ पदार्थों की 6 इंच की ऊंचाई तक भरते हैं। इस प्रकार व्यर्थ पदार्थों की 30 घन फीट में लगभग एक कुन्टल की आवश्यकता होती है।

दूसरी परत – गोबर के घोल की होती है इसके लिए 150

लीटर पानी में 4 किलोग्राम गोबर अथवा बायोगैस संयंत्र से प्राप्त गोबर के घोल की ढाई गुना ज्यादा मात्रा में प्रयोग में लाते हैं। इस घोल की अनुपयुक्त फसल अवशेषों द्वारा निर्मित पहली परत पर अच्छी तरह से भीगने देते हैं।

तीसरी परत – छनी हुई सूखी मिटटी की प्रति परत आधा इंच मोटी दूसरी परत के ऊपर बिछाकर समतल कर लेते हैं।

चौथी परत – इस परत को वास्तव में परत न कह कर पानी की छींटें कह सकते हैं। इसलिए आवश्यक है कि टैंक में लगायी गई परतें ठीक से बैठ जायें।

इस क्रम को क्रमशः टांका के भरने तक दोहराते हैं। टैंक भर जाने के बाद अन्त में 2.5 फीट ऊंचा झोपडीनुमा आकार में भराई करते हैं कि 10 अथवा 12 परतों में गडढा भर जाये। यदि नाडेप कम्पोस्ट की गुणवत्ता में अधिक वृद्धि करना है तो आधा इंच मिटटी की परतों के ऊपर 1.5 किलोग्राम जिप्सम ग्राम +1.5 किलोग्राम राक फास्फेट+1 किलोग्राम यूरिया का मिश्रण बनाकर 100 ग्राम प्रति परत बिखेरते हैं। टांका भरने के 60 से 70 दिन बाद राइजोबियम + पी0 एस0बी0+ एजोटोबैक्टर का कल्चर बना कर मिश्रण को छेदों के द्वारा टांका में डाल देना चाहिए।

टांका भरने के 15 से 20 दिनों बाद उसमें दरारे पड़ने लगती हैं तथा इस विघटन के कारण मिश्रण टैंक में नीचे की ओर बैठने लगता है। ऐसी अवस्था में इसे उपरोक्त बताई गई विधि से दुबारा भरकर मिटटी एवं गोबर के मिश्रण से उसी प्रकार लीप दिया जाता है। टांका में सदैव 60 प्रतिशत नमी रहनी चाहिए। इस तरह से नाडेप कम्पोस्ट 90 से 110 दिन में बनकर तैयार हो जाती है। लगभग 3.0 से 3.25 टन प्रति टैंक नाडेप कम्पोस्ट बनकर प्राप्त होती है। इस खाद का प्रयोग 3.5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से खेतों में प्रयोग करना पर्याप्त होता है। नाडेप कम्पोस्ट में 0.5 से 0.75 प्रतिशत नत्रजन, 0.5 से 0.9 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 1.2 से 1.4 प्रतिशत पोटाश पाई जाती है।

वर्मी कम्पोस्ट :

केचुओं की सहायता से कार्बनिक/जीवांश पदार्थों को विघटित करके/सड़ाकर जो खाद तैयार होती है, उसे वर्मी कम्पोस्ट अथवा केंचुए की खाद कहलाती है। वर्मी कम्पोस्टिंग कृषि के अवशिष्ट पदार्थ, शहर तथा रसोई के कूड़े कचरे को पुनः उपयोगी पदार्थ में बदलने तथा पर्यावरण प्रदूषण को कम करने की एक प्रभावशाली विधि है।

वर्मी कम्पोस्ट कम्पोस्ट बनाने में निम्नलिखित कार्बनिक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है।

- **कृषि अथवा फसल अवशेषः** पुआल, भूसा, गन्ने की खोई, फसलों की पत्तियां, खरपतवार, घास, फसलों के डंठल, बायोगैस अवशेष, गोबर आदि।
- **घरेलू एवं बाहरी कूड़ा कचराः** सब्जियों के छिलके तथा अवशेष, फलों के छिलके तथा अवशेष, सब्जी मण्डी का कचरा, भोजन का अवशेष आदि।
- **कृषि उद्योग सम्बन्धी व्यर्थ पदार्थः** वनस्पति तेल, शोध मिल, चीनी मिल, शराब उद्योग, बीज तथा खाद्य प्रसंस्करण उद्योग तथा नारियल उद्योग आदि।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए केंचूए प्रजातियों में मुख्य रुप से *इसेनिया फोटिडा* तथा *इयूड्रिल्स इयूजीनी* है जिन्हे केंचुऐं की लाल प्रजाति भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त *पेरियानिक्स एक्सवकेटस, लैम्पीटो माउरीटी, डावीटा कलेवी* तथा डिगोगीस्टर बोलाई भी हैं जो कम्पोस्टिंग में प्रयोग की जाती हैं परन्तु यह लाल केचुओं से कम प्रभावी हैं।

आई. आई. वी. आर., इज्जत नगर, बरेली ने केंचुए की देशी प्रजाति जय गोपाल विकसित की है जो भारत जैसे देश में खाद बनाने के लिए उपयुक्त है।

किसी ऊंचे छायादार स्थान जैसे पेड के नीचे अथवा बगीचे में 2 मीटर x 2 मीटर x 2 मीटर क्रमशः लम्बाई, चौडाई तथा गहराई का गडढा बनायें। गडढे के अभाव में इसी माप की लकडी अथवा प्लास्टिक की पेटी का भी प्रयोग किया जा सकता है। जिसकी निचली सतह पर जल निकास हेतु 10–12 छेद बना दिये जाते हैं।

अ. सबसे नीचे ईंट अथवा पत्थर की 10 सेमी की परत बनाकर फिर 2.0 सेमी मौरंग अथवा बालू की दूसरी तह लगाई जाती है। इसके ऊपर 15 सेमी उपजाऊ मिटटी की तह लगाकर पानी के हल्के छिड़काव करके

नम कर देते हैं। इसके बाद अर्धसड़ी गोबर की खाद डालकर एक किलो प्रति गडढे की दर से केंचुए छोड़ दिये जाते हैं।

ब. इसके ऊपर 5 – 10 सेमी0 घरेलू कचरे जैसे सब्जियों के अवशेष, छिलके आदि कटे हुए फसल अवशेष जैसे पुआल, भूसा, जलकुम्भी, पेड़–पौधों की पत्तियां आदि को बिछा देते हैं। 20 – 25 दिन तक आवश्यकतानुसार पानी का हल्का छिड़काव करते रहते हैं। इसके बाद प्रति सप्ताह दो बार 5 – 10 सेमी सडने योग्य कूड़े कचरे की तह लगाते रहें जब तक कि पूरा गडढा भर न जाये। रोज पानी का छिड़काव करते रहना चाहिए। कार्बनिक पदार्थ के ढेर पर लगभग 50 प्रतिशत नमी होनी चाहिए। 6 – 7 सप्ताह में वर्मी कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाती है। वर्मी कम्पोस्ट बनने के बाद 2 – 3 दिन तक पानी का छिड़काव बन्द कर देना चाहिये। इसके बाद खाद निकाल कर छाया में ढेर लगााकर सुखा देते हैं। फिर इसे 2 मिली के छन्ने से छानकर अलग कर लेते हैं। इस तैयार खाद में 20–25 प्रतिशत नमी होनी चाहिए। इस तैयार खाद को प्लास्टिक की थैलियों में भर कर भन्डारण कर लेते हैं।

इसके अतिरिक्त वर्मी कम्पोस्ट का निर्माण वायु पंक्ति (विन्डरो) विधि से भी किया जाता है जिसमें जीवांश पदार्थ का ढेर किसी छायादार जमीन की सतह पर लगाकर किया जाता है। वर्मी कम्पोस्ट का निर्माण रियेक्टर विधि से भी किया जाता है जो कि अधिक खर्चीली तकनीकी है। उपरोक्त विधि अत्यन्त सरल है जिसे किसान आसानी से अपना सकता है।

वर्मी कम्पोस्ट में अन्य जीवांश खादों की तुलना में अधिक पोषक तत्व होते हैं। इसमें नन्नजन 1–1.5 प्रतिशत, फॉस्फोरस 1.5 प्रतिशत तथा पोटाश 1.5 प्रतिशत होता है। इसके अतिरिक्त इसमें द्वितीयक तथा सूक्ष्म पोषक तत्व भी मौजूद होते हैं।

धान्य फसलों, तिलहन तथा सब्जियों के लिए 5.0 से 6.0 टन वर्मी कम्पोस्ट प्रति है0 की दर से प्रयोग करना चाहिए। बुवाई के पहले इसे खेत में बिखेर कर जुताई करके भूमि में मिला देना चाहिए। फलदार वृक्षों में 200 ग्राम प्रति पौधा तथा घास के लान में 3 किग्रा0/10 वर्ग मीटर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

हरी खाद का प्रयोगः

मिटटी की उर्वरा शक्ति में वृद्धि हेतु पौधों के हरे वनस्पति को उसी खेत में उगाकर अथवा दूसरे स्थान से लाकर खेत में मिला देने की क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं।

हरी खाद का प्रयोग की मुख्यतः दो विधियां हैंः

अ. उसी खेत में उगााई जाने वानी हरी खादः जिस खेत में खाद देनी होती है, उसी खेत में फसल उगाकर उसे मिट्टी पलटने वाले हल से जोतकर मिटटी में मिला दिया जाता है। इस विधि से हरी खाद तैयार करने के लिए सनई, ढैचा, ग्वार, मूंग, उर्द आदि फसलें उगाई जाती हैं।

ब. खेत से अलग उगाई जाने वाली हरी खादः जब फसलें अन्य दूसरे खेतों में उगाई जाती हैं और वहां से काटकर जिस खेत में हरी खाद देना होता है, उसमे मिट्टी पलटने वाले हल से जोतकर दबा देते हैं। इस विधि में जंगलों अथवा अन्य स्थान पर उगे पेड पौधों एवं झाडियों की पत्तियों एवं टहनियों आदि को खेत में मिला दिया जाता है।

हरी खाद हेतु प्रयोग की जाने वाली फसलें जैसे सनई, ढैंचा, मूंग, उर्द, मोठ, ज्वार, लोबिया, जंगली नील, बरसीम, सैंजी आदि।

हरी खाद के प्रयोग से निम्न लाभ हैं–

1. हरी खाद से मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होने से मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशा में सुधार होता है।
2. नाइट्रोजन की वृद्धि हरी खाद के लिए प्रयोग की गई दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रन्थियां होती हैं। जो नत्रजन का स्थिरीकरण करती हैं। फलस्वरुप नत्रजन की मान्ना में वृद्धि होती है। ढैंचा की हरी खाद के रुप में प्रयोग करने से प्रति है0 60 किग्रा0 नत्रजन की बचत होती है तथा मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि होती है जो टिकाऊ खेती के लिए आवश्यक है।

गेंदा : उच्च आय हेतु व्यावसायिक फसल

सपना पंवार, कॅवर पाल सिंह, दावेन्द्र कुमार एवं नमिता
पुष्प एवं भूदृष्य निर्माण संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

गेंदा भारत में उगायी जाने वाला एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक फसल हैं। यह एस्टेरेसी परिवार से सम्बंधित हैं। जीनस टैगेटस में 33 प्रजातियां शामिल है जिनमें से दो प्रजातियां अर्थात *टैगेटस इरेक्टा* (अफ्रीकी गेंदा) एवं *टैगेटस पैटुला* (फ्रेंच गेंदा) को व्यावसायिक तौर पर खुले फूलों के उत्पादन के लिए प्रयोग में लाया जाता हैं। इसके प्रमुख उत्पादक राज्य मध्य प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, छत्तीसगढ, ओडिशा इत्यादि हैं। यदि गेंदा की खेती वैज्ञानिक तकनीक अपनाकर करें, तो इसकी फसल से उत्तम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता हैं।

गेंदा का उपयोग व्यापक रूप से धार्मिक और सामाजिक कार्यों में किया जाता हैं। इसके अतिरिक्त गेंदा का उपयोग वाणिज्यिक रूप से फार्मास्यूटिकल्स, फूड सप्लीमेंट्स, मुर्गी आहार, एडिटिव्स और कलरेंट्स के लिए किया जाता हैं। कुछ देशों में गेंदे की खेती व्यवसायिक रूप से करोटेनोइड पिगमेंट प्राप्त करने के लिए भी की जाती हैं। गेंदे को गमले एवं उद्यानों में उगाने हेतू उपयोग किया जाता हैं। इसकी प्रजाति, *टैगेटस माइनुटा* आवश्यक तेल का समृद्ध स्त्रोत हैं, जिसका प्रयोग औद्योगिकी क्षेत्र मे विभिन्न उत्पाद बनाने हेतु किया जाता हैं। गेंदा मे रोगाणुरोधी, सूत्रकृमिरोधी गुण भी पाये जाते हैं।

किस्में

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित गेंदा की उन्नत किस्में

पूसा बसंती गेंदा

यह अफ्रीकी गेंदा समूह का हैं। इसके फूल पीले रंग के होते हैं। यह किस्म खुले फूल के लिए उपयुक्त हैं। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इस प्रजाति की बुवाई का समय सितंबर–अक्तूबर एवं पुष्पन का मुख्य समय फरवरी–मार्च होता हैं। इसका उत्पादन 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर ताजे फूल का होता हैं।

पूसा नारंगी गेंदा

यह पुष्प अफ्रीकी गेंदा समूह का हैं। इसके पुष्प घुमावदार एवं गहरे नारंगी रंग के होते हैं। यह किस्म खुले फूल के लिए उपयुक्त हैं। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इस प्रजाति के बुवाई का समय सितंबर–अक्तूबर एवं पुष्पन का मुख्य समय फरवरी–मार्च होता है। इसका उत्पादन 25–30 टन प्रति हेक्टेयर ताजा फूल हैं।

पूसा बहार

यह अफ्रीकी गेंदा वर्ग की खुले परागण वाली प्रजाति हैं। इसके पुष्प, चपटे, आकर्षक,बड़े आकार (8–9 सेंटी मीटर) एवं पीले रंग के होते हैं। यह प्रचुर मात्रा में फूल देने वाली प्रजाति है। जिनमें प्रति पौधा औसतन पुष्पों की संख्या 50 से 60 होती हैं। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इस प्रजाति के बुवाई का समय सितंबर–अक्तूबर एवं पुष्पन का मुख्य समय मध्य जनवरी से मार्च तक होता हैं। यह बागानों में बेडिंग के साथ–साथ अन्य फूलों की सजावट के लिए उपयुक्त हैं।

पूसा अर्पिता

यह फ्रांसीसी गेंदा समूह का हैं। इसके पुष्प मध्यम आकर एवं हलके नारंगी रंग के होते हैं। यह किस्म खुले फूल के लिए उपयुक्त हैं। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इस प्रजाति की बुवाई का समय जुलाई–अगस्त एवं पुष्पन का मुख्य समय मध्य दिसम्बर से मध्य फरवरी होता हैं। इसका उत्पादन 18 से 20 टन प्रति हेक्टेयर ताजा फूल का होता हैं।

पूसा बसंती गेंदा

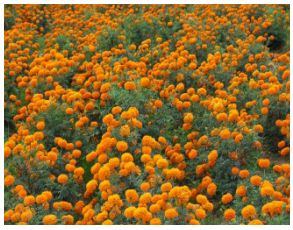

पूसा नारंगी गेंदा

पूसा बहार

पूसा अर्पिता

पूसा दीप

पूसा दीप

यह फ्रांसीसी गेंदा वर्ग की शीघ्र फूल देने वाली प्रजाति है। इसके फूल मध्यम आकार वाले एवं गहरे लाल रंग के होते हैं। यह किस्म खुले फूल के लिए उपयुक्त हैं। यह प्रचुर मात्रा में फूल देने वाली प्रजाति हैं जिनमे प्रति पौधा औसतन पुष्पों की संख्या 80 से 90 तथा 18 से 20 टन प्रति हेक्टेयर होती हैं। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इस प्रजाति की बुवाई का समय जुलाई–अगस्त एवं पुष्पन का मुख्य समय अक्तूबर–नवम्बर होता हैं। त्योहारों के समय में पुष्पन के कारण यह प्रजाति खुले फूलों की खेती हेतु काफी उपयुक्त है।

इसके अतिरिक्त, गेंदा की अन्य किस्में अर्का अग्नि, अर्का बंगारा, अर्का अलंकारा, अर्का हनी, अर्का परी, हिसार जाफरी, हिसार ब्यूटी, बिधान गेंदा–1, बिधान गेंदा–2 इत्यादि खुले फूलों हेतु खेती करने के लिए उपयुक्त हैं।

जलवायु एवं भूमिः गेंदा के उत्पादन के लिए सामान्यतः औसत जलवायु की आवश्यकता होती है। गेंदा विभिन्न ऋतुओं जैसेः वर्षा, सर्दी, गर्मी में उगाया जाता हैं। गेंदा को लगभग सभी प्रकार की भूमि मे उगाया जा सकता हैं, किंतु दोमट, अच्छी जल धारण क्षमतायुक्त तथा जल निकास वाली भूमि जिसका पी एच मान 6.5 से 7.0 के बीच हो, उसे सबसे उपयुक्त एवं उत्तम माना जाता हैं। मिट्टी जितनी दानेदार एवं भुरभुरी हो उतनी ही फसल के लिए लाभदायक होती हैं।

प्रवर्धनः गेंदों का प्रवर्धन निम्नलिखित दो प्रकार से किया जा सकता हैं।

(अ) बीज प्रवर्धनः गेंदे का प्रवर्धन व्यावसायिक स्तर पर बीज द्वारा ही किया जाता हैं। गेंदे के पौधे को बीज द्वारा नर्सरी मे तैयार किया जाता हैं जिसके लिए बीज की मात्रा 800–1000 ग्राम प्रति हेक्टेयर उपयुक्त है। गेंदें की पौध को तैयार करने के लिये सामान्यतः ऊँची जमीन का चुनाव करना चाहिए जहाँ पर पानी का जमाव न होता हो। नर्सरी बेड लगभग 1 मी. चौड़ी तथा जमीन की सतह से 15 से. मी. ऊँची बनाते हैं और लम्बाई आवश्यकता अनुसार रख सकते हैं। दो क्यारीयों के बीच 30–40 से.मी. का अंतर होना चाहिए ताकि अंतसस्यन का कार्य आसानी से किया जा सके। नर्सरी की क्यारी की मिट्टी अच्छी तरह भुरभुरी करके, सड़ी हुई गोबर की खाद 10 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से मिला देते हैं। बीज बोने से पहले सभी क्यारियों को केप्टान/कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) के घोल द्वारा ड्रेंच कर देना चाहिए, जिससे नर्सरी में हानिकारक कवक का प्रकोप कम हो जाता हैं एवं बीज के अंकुरण के बाद पौधों की मृत्यु की आशंका खत्म हो जाती हैं। नर्सरी में बीज से बीज की दूरी का अंतर 1–2 से.मी. होना चाहिए क्योंकि पास–पास में बीज की बुवाई होने के कारण पौधा कमजोर हो जाता है जिससे मुख्य खेत मे उसकी बढ़वार तथा पुष्प उत्पादन मे कमी आती है। बीज के बुवाई के पश्चात मल्चिंग के रूप मे सड़ी पत्ती या

गोबर की खाद को बालू में मिलाकर बिछाना चाहिए। ऐसा करने से क्यारी में हर समय नमी बनी रहती है एवं बीज का अंकुरण भी अच्छा होता हैं। बीजाई की क्यारियों को हजारा द्वारा सिंचना चाहिए तथा बीज अंकुरण के बाद नाली द्वारा हल्का पानी देना चाहिए। नर्सरी में लगातार नमी बनाये रखने के लिए मौसम के अनुसार सिंचाई सुनिश्चित करें।

विभिन्न मौसमों में गेंदा की बुवाई और रोपाई की समय सारणी

फसल	बीज बुवाई का समय	पौध रोपन का समय
वर्षाकालीन फसल	मध्य जून से जुलाई प्रथम सप्ताह	जुलाई प्रथम सप्ताह से आखिरी सप्ताह तक
शरदकालीन फसल	मध्य सितम्बर से मध्य अक्तूबर	अक्तूबर प्रथम सप्ताह से नवम्बर प्रथम सप्ताह तक
ग्रीष्मकालीन फसल	मध्य जनवरी से फरवरी के अंतिम सप्ताह	फरवरी – मार्च

(ब) कायिक प्रवर्धनः कायिक प्रवर्धन के लिये कलम उपयुक्त रहती है। जिनकी लम्बाई 6–8 से.मी. होनी चाहिए। पौध से शीर्ष कलम लेने के पश्चात निचले हिस्से की 3–4 से.मी. तक पत्तियों को निकाल देना चाहिए। इसके बाद कलम को जड़ उत्प्रेरक हार्मोन (आई बी ए 250 से 300 पी पी एम) द्वारा उपचार करके उपलब्धता अनुसार बालू या कोकोपीट, परलाइट, वर्मीकुलाइट के 3:1:1 क्रमशः मीडिया मे लगाना चाहिए। नमी बनाये रखने के लिये सुबह–शाम हजारा की मदद से पानी का छिड़काव करना चाहिए। शीर्ष कलम लगाने के 10–12 दिन बाद शीर्ष कलम से जड़ आना आरंभ हो जाता है। इस प्रकार कायिक प्रवर्धन विधि से 20–25 दिन मे पौध रोपन हेतु तैयार हो जाते हैं।

शीर्षनोचन (पिंचिंग): पौध रोपन के एक महीने पश्चात शीर्ष कलिकाओं को दो पत्तियों सहित हाथ की मदद से तोड़ देने की क्रिया को शीर्षनोचन कहते हैं। जिससे सहायक शाखाएं अधिक संख्या में निकलती है, जो की पौधे का फैलाव बढ़ाने मे सहायक होती हैं। प्रथम शीर्षनोचन रोपाई के एक माह पश्चात जब पौधों की लम्बाई लगभग 15–20 से.मी. हो जाये तब करनी चाहिए। एक बार पुनः प्रथम शीर्षनोचन के 15 से 20 दिन के बाद सहायक शाखाओ को ऊपर से दो पत्तियों सहित तोड़ देना चाहिए, इससे अत्याधिक शाखाएं निकलती हैं तथा पुष्पों की संख्या मे काफी बढ़ोत्तरी होती है।

मिट्टी चढाईः रोपाई से 30 एवं 60 दिन के बाद कुदाल से मिट्टी चढाई की जानी चाहिए। मिट्टी चढाई के तुरंत बाद खेत में उर्वरक डालना चाहिए। मिट्टी चढाई किये जाने से खरपतवार में नियंत्रण तथा पौधे की जड़ तक वायु पहुंचने से पौधे का विकास एवं वृद्धि अच्छी होती है।

गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रणः फसल को खरपतवार मुक्त रखने के लिए पौधों की रोपाई के लगभग एक माह बाद से ही गुड़ाई शुरू कर देनी चाहिए। ऐसा करने से मिट्टी भुरभुरी बनी रहती हैं जिससे जड़ोंकी अच्छी वृद्धि एवं विकास होता हैं। मिट्टी की गुड़ाई बहुत गहरी नहीं करनी चाहिए। मिट्टी की अधिक गहराई तक गुड़ाई करने से जड़ों की क्षति होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है। खरपतवार जब कायिक अवस्था में रहे उसी समय जड़ सहित उखाड़ देना चाहिए जिससे मुख्य फसल कमजोर न हो।

सिंचाईः गेंदा की खेती में पौध वृद्धि एवं विकास के लिये सिंचाई एक अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। मृदा मे अच्छी नमी होने से पौधों का विकास एवं वृद्धि अच्छी होती है तथा मृदा मे उपस्थित रसायनिक तत्व पौधों तक सरल रूप से पहुंचते हैं। गर्मीयों के समय में 4–5 दिन के अंतराल पर एवं सर्दियों मे 8–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः खाद एवं रसायनिक उर्वरक देने से गेंदा के पौधों की वृद्धि एवं विकास ठीक तरह से होता हैं एवं पुष्पोत्पादन भी बढ़ जाता है। गोबर की सड़ी हुई खाद 20–25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। इसके अतिरिक्त रसायनिक उर्वरकों के द्वारा 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। नाइट्रोजन की मात्रा तीन बराबर भागों मे बांटकर, मुख्य खेत की तैयारी के समय, रोपाई के 30 दिन बाद एवं रोपाई के 60 दिन बाद, उर्वरक को बराबर–बराबर भाग में देना चाहिए। फॉस्फोरस

एवं पोटाश की पूरी मात्रा को मुख्य खेत की तैयारी के समय मिट्टी मे मिला देना चाहिए।

फूलों की तुड़ाईः फूलों की तुड़ाई का कार्य प्रातःकाल या शाम के समय करना चाहिए। फूलों को पौधों से तब तोडना चाहिए, जब पुष्प पूर्ण रूप से खिल जायें। फूलों को तोड़ने के पश्चात् अधिक नमी उपस्थित होने की अवस्था मे छायादार स्थान पर समरूप से फैला देना चाहिए तथा फूलों मे नमी कम होने के पश्चात उन्हें हल्के टाट पर या बांस की टोकरियों मे पैकिंग करके बाजार भेजना चाहिए।

उपजः ताजे फूलों की उपज किस्मों, ऋतु और देखरेख के ऊपर निर्भर होती है। यदि सही तरीके से फसल पर ध्यान देकर उन्नत वैज्ञानिक तरीके से खेती की जाये तो अफ्रीकी गेंदा लगभग 20–25 टन प्रति हेक्टेयर एवं फ्रेंच गेंदा में लगभग 18–20 टन प्रति हेक्टेयर फूलों की उपज प्राप्त की जा सकती है।

मुख्य कीट और उनके रोकथाम

लाल मकड़ी : यह कीट गेंदे की पत्तियों का रस चूस लेती है, जिसके कारण पत्तियां हरे रंग से भूरे में परिवर्तित हो जाती हैं और पौधों की वृद्धि एवं विकास रूक जाता है। अत्यधिक प्रकोप की दशा मे पौधा फूल उत्पादन बिल्कुल भी नहीं कर पाता है। जो कलिया बनती हैं वह भी नहीं खिल पाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए केलथेन (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

एफिड्स :–एफिड पौधों का रस चूसने वाला कीट है जो पौधे के सबसे कोमल भागों मुख्यतः सिरा, पत्तियां एवं फूलों को क्षति पहुंचाते हैं। इसके रोकथाम के लिए डाइमेथोएट (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

कैटरपिलरः यह पत्तियों, टहनियों एवं कलियों को नुकसान पहुचाते हैं। इसके रोकथाम के लिए डाइक्लोरोवास (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

थ्रिप्सः थ्रिप्स पौधों का रस चूसने वाला कीट हैं जो पौधों को क्षतिग्रस्त करता है जिनके कारण पौधा विकृत हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिये पीला चिपचिपा जाला या मोनोक्रोटोफॉस (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

रोग एवं उनके रोकथाम

आर्द्रगलन :–यह बीमारी मुख्यतः *राइजोक्टोनिया सोलेनाई, फाइटोप्थोरा स्पीशिज* एवं *पीथियम स्पीशिज* इत्यादि कवकों द्वारा होता है। यह रोग आमतौर पर नर्सरी अवस्था के दौरान देखा जाता है। इस रोग में पौध का निचला भाग सड़ने के कारण पौध सुख जाता है। इसके रोकथाम के लिए नर्सरी तैयार करते समय मिट्टी को कार्बेन्डाजिम (0.2 प्रतिशत) का घोल बनाकर ड्रेंचिंग करना चाहिए।

पर्ण दाग एवं अंगमारी : यह बीमारी *अल्टरनेरिया स्पीशिज* कवक के संपक्र मे आने के कारण होता है। इस बीमारी से प्रभावित पौधों के पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे आरंभ होकर पूरी पत्तियां मे फैल जाते हैं जिसके कारण धीरे–धीरे पौधों की पत्तियॉ खराब हो जाती है। इस बीमारी के रोकथाम के लिए डायथेन एम–45 का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर पौधों मे छिड़काव करना चाहिए।

चुर्णी फफुंदी : गेंदा मे चुर्णी फफुंदी *ओडियम स्पीशीज* और *लोविल्ला टाउरिका* कवकों के संक्रमण होने के कारण होता है। बीमारी में पौधों की पत्तियों में सफेद पावडर दिखाई देने लगता है जो कि कुछ समय बाद पुरी पत्तियों मे फैल जाता है। इस रोग के कारण फूलों के आकार में वृद्धि नहीं हो पाती है। चुर्णी फफुंदी के रोकथाम के लिए कैराथेन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

आम के मूल्यवर्धन से बढ़ाएं आमदनी

राम रोशन शर्मा, विद्या राम सागर एवं श्रुति सेठी
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012

आम को भारत में फलों का राजा कहा जाता है। हमारे देश में इसकी खेती लगभग 4000 वर्षों से की जा रही है। विश्व में आम की लगभग 1600 किस्में उगाई जाती हैं जिसमें 1200 भारत में पाई जाती हैं। हांलाकि व्यावसायिक स्तर पर केवल 2–3 दर्जन किस्में ही उगाई जाती हैं। भारत में उगाई जाने वाली आम की किस्में ना केवल स्वादिष्ट होती हैं अपितु वे उत्कृष्ठ सुवासयुक्त व दिखने में भी आकर्षक होती हैं। भारत में उगाए जाने वाले फलों के क्षेत्रफल का लगभग 43 प्रतिशत हिस्से में आम उगाया जाता है एवं फलों के कुल उत्पादन का 22 प्रतिशत हिस्सेदारी आम की है। आम का कुल क्षेत्रफल 2550 हजार हेक्टेयर है जिससे लगभग 18,200 हजार मि. टन उत्पादन होता है। आम उगाने वाले विभिन्न प्रदेशों में आन्ध्र प्रदेश व उत्तर प्रदेश की 24.2 प्रतिशत हिस्सेदारी है। उसके बाद प्रमुख उत्पादक प्रदेश कर्नाटक (10 प्रतिशत) एवं बिहार (7 प्रतिशत) है।

आम का प्रसंस्करण

जैसा पहले बतलाया जा चुका है कि आम के फलों को प्रत्येक अवस्था पर किसी ना किसी मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार करने हेतु प्रयुक्त कर सकते हैं। उदाहरणार्थ हमारे देश में आम को मुख्यतः चटनी, आमचूर एवं पापड़ आदि मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार करने हेतु प्रयुक्त करते हैं। परंतु दिन प्रतिदिन शोध कार्यों द्वारा नई–नई तकनीकें विकसित कर नए उत्पादों का भी सृजन हो रहा है। आम से तैयार किए जाने वाले कुछ उत्पादों का विवरण निम्नलिखित हैः

अ. कच्चे आम के उत्पाद

कच्चे आमों को विभिन्न प्रकार से उपयुक्त किया जा सकता है। शुरू में आमों को खट्टी या मीठी चटनी बनाने हेतु प्रयुक्त करते हैं। परंतु जब फल के अंदर गुठली सख्त होना शुरू होती है तो उस अवस्था के आमों से कई प्रकार के उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं।

आमचूर

सामग्रीः कच्चे आम एवं 0.2 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट का घोल।

विधिः कच्चे आमों (विशेषतः बीजू पौधों से) की तुड़ाई कर उन्हें धोकर छिलका उतारें। बाद में उन्हें 4–5 मि.मी. मोटे एवं 30–40 मि.मी. लम्बे टुकड़ों में काटें। इन टुकड़ों को पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट के 0.2 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबोकर रखें। तदोपरांत इन टुकड़ों को या तो खुले स्थान पर या सौर–शुष्कारित्र या बिजली के शुष्कारित्र में सुखाएं। निर्जलीकरण के बाद इन टुकड़ों को पीसकर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण को पॉलिथीन के पाउच या वायुरहित डिब्बों में पैक कर ठण्ड़े स्थान पर भण्डारित करें।

आमचूर

पन्ना

आम के कच्चे फलों को भूनकर अथवा उबालकर उनका गूदा निकाल लेते हैं। फिर इसमें प्रति कि.ग्रा. गूदे के आधार पर 0.8 कि.ग्रा. शक्कर 0.4 लीटर पानी, 80 ग्राम नमक, 20 ग्राम पूदीना, 10 ग्राम पीसा जीरा, 4 ग्राम काली मिर्च और 20 ग्राम साइट्रिक अम्ल मिलाकर गर्म करते हैं।

तत्पश्चात् इसको स्कवैश की भांति बोतलों में भर लेते हैं। अधिक दिनों तक भण्डारण करने के लिए इसमें 500 पी. पी.एम. सोडियम बेन्जोएट भी मिलाना चाहिए। यदि इस उत्पाद में 6 से 7 गुना ठंडा पानी मिलाया जाये तो पीने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

पन्ना

अचार

कच्चे आमों से विभिन्न प्रकार के अचार जैसे मीठा, खट्टा, हॉट या तेलयुक्त आदि बना सकते हैं। हांलाकि तेलयुक्त अचार ही मुख्यतः तैयार किया जाता है क्योंकि इसी की ही मार्केट में मांग भी रहती है।

आवश्यक सामग्रीः एक किलो ग्राम आम के टुकड़े, 40 ग्राम नमक, 40 ग्राम मेथी, 50 ग्राम अदरक, 20 ग्राम हल्दी, 25 ग्राम लाल मिर्च, 30 ग्राम काली मिर्च, 30 ग्राम सौंफ एवं 300 ग्राम सरसों का तेल आदि।

विधिः पूर्ण परिपक्व आमों को धोकर टुकड़ों में काटें एवं उन्हें नमक के साथ भलि भांति मिला लें। इन्हें पॉलिथीन के थैलों या कांच के मर्तबान में बंद करके धूप में तब तक रखें जब तक कि टुकड़ों का हरा रंग लुप्त ना हो जाये। पीसे हुए मसालों एवं अदरक के टुकड़ों को मिलाएं। अब तेल तब तक गर्म करें जब तक उससे धुआं आना शुरू ना हो। उसके बाद इसे ठण्डा करें। इस तेल में विभिन्न मसालों को डालकर गर्म करें। इस मिश्रण को लगतार हिलाते रहें ताकि वे जल ना पाएं। अब इसमें धूप में तैयार आम के टुकड़ों को ड़ाल कर तब तक उबालें जब तक कि सभी आपस में अच्छी तरह ना मिल जायें। अब गर्म करना बंद करके इसमें 10 मि.ली. ग्लेशियल एसिटिक अम्ल डालकर कुछ मात्रा में लौंग एवं इलाईची ड़ालें। ठंडा करके किसी अच्छे बर्तन में ड़ालकर पैक करें।

अचार

ब. पके आम के उत्पाद

पके आमों का उपयोग विभिन्न उत्पाद जैसे गूदा, नेक्टर, जूस, स्कवैश, स्लाईस, पापड़ एवं चूर्ण आदि मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार करने हेतु किया जाता है। कुछ ऐसे उत्पादों को तैयार करने की विधि का विवरण निम्नलिखित हैः

गूदा

पके आमों से गूदा तैयार करने हेतु सर्वप्रथम पूर्णतः पके आमों को चुन कर उन्हें साफ जल से धोएं। छिलका उतारकर उन्हें एक समान टुकड़ों में काटें एवं गूंथ कर एक जैसा करें। अब गूदे से छलनी द्वारा रेशे को निकाल लें। मीठी किस्मों के गूदे में प्रति किलोग्राम 3 ग्राम सिट्रिक अम्ल डालें। गूदे को लगातार हिलाते हुए 76–70^0 सेल्सियस पर गर्म कर बाद में 40^0 सेल्सियस तापमान तक ठण्डा करें। अब प्रति किलोग्राम गूदे के हिसाब से 1–2 ग्राम पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट डालें। गूदे को एक दम साफ व निर्जर्मीकृत कांच या प्लास्टिक के पात्रों में भर दें। बाद में इन पात्रों में साफ सुथरे, सूखे एवं ठण्डे स्थान पर भण्डारित करें।

गूदा

रस

आम का रस निकालने हेतु उन सभी किस्मों को प्रयुक्त कर सकते हैं जिन्हें हम ताजे फल के रूप में खाना पसंद करते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम उपरोक्त विधि से गूदा निकालते हैं। तदोपरांत 30 प्रतिशत गूदे को 70 प्रतिशत जल में घोलकर, मन अनुसार शक्ररा (लगभग 20 प्रतिशत) एवं 0.3 प्रतिशत सिट्रिक अम्ल डालकर आम का रस तैयार कर लेते हैं। एक किलोग्राम गूदे के लिए सामान्यतः 1.85 कि.ग्राम जल, 450 ग्राम शक्ररा एवं 8 ग्राम सिट्रिक अम्ल की आवश्यकता होती है। इन सभी घटकों को मिलाकर 95^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म करें एवं गर्म–गर्म को ही निर्जर्मीकृत बोतलों में भरकर कॉक्र लगाएं। तदोपरांत इन बोतलों को उबलते पानी में 20–25 मिनट तक गर्म किया जाता है। अब बोतलों को निकाल कर कमरे के सामान्य तापमान पर ठण्ड़ा कर इन्हें किसी साफ सुथरे, सूखे एवं ठंडे स्थान पर भण्डारित करते हैं।

जूस

स्कवैश

आम की स्कवैश तैयार करने हेतु उपरोक्त लिखित विधि की तरह गूदा निकालें। उसके बाद, 1.75 कि.ग्राम शक्ररा को 1.25 कि.ग्राम पानी में घोलकर उबालें। फलों की मिठास के अनुसार इसमें 25 से 35 ग्राम सिट्रिक अम्ल ड़ालें। इस प्रकार तैयार सीरप को एक कि.ग्राम गूदे में ड़ालकर अच्छी तरह से मिलाएं। यदि गूदा ताजा–ताजा निकाला गया हो तो उसमें कुछ पानी में घुला 2.8 ग्राम पोटेशियम मेटाबाइसल्फाईट ड़ालकर अच्छी तरह से मिलाएं। इस प्रकार तैयार स्कवैश को निर्जर्मीकृत बोतलों में भरकर ढक्कन/कॉक्र लगा दें। तदोपरांत बोतलों को ठण्ड़े स्थान पर भण्डारित करें।

आम पापड

पापड़, आम का सबसे प्रचलित एवं लोकप्रिय उत्पाद है। भारत में लोग इसे बहुत पसंद करते हैं। आम पापड़ तैयार करने हेतु पूर्णतः पके आमों से गूदा निकालें। गूदे में 2 ग्राम पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट/कि.ग्रा. के हिसाब से मिला कर इसे एल्युमिनियम पत्रकों या ट्रे में बिछाएं एवं इसे सौर–शुष्कारित्र या अवन में सुखाएं। जब गूदे की पहली परत सूखने को हो तो बाद में दूसरी, फिर तीसरी परत बिछा दें। जब यह पूर्णतः सूख जाये तो इसको चाकू से मन चाहे वर्गाकार या आयताकार टुकड़ों में काट कर मक्खनी पेपर या पॉलिथीन से लपेट दें। तदोपरांत इसे साफ सुथरे एवं शुष्क स्थान पर भण्डारित करें।

आम पापड

निर्जलीकृत फांकें

पके आमों को निर्जलीकृत फांकों में भी परिवर्तित किया जा सकता है जिन्हें या तो ऐसे ही खाया जा सकता है या पीस कर आम का चूर्ण बनाया जा सकता है। यह चूर्ण, आम का पेय तैयार करने हेतु अच्छी सामग्री होती है, विशेषकर तब जब मौसम में ताजे आम उपलब्ध ना हों। पके आम का चूर्ण सभी आयु वर्ग के लोगों को पसंद आता है। यह विटामिन 'ए', 'सी' के अतिरिक्त कैल्शियम का अच्छा स्रोत होता है। इसे मैंगो शेक, जूस मिक्स, शर्बत, आईसक्रीम, सुवास, बिस्कुट आदि कई उत्पादों में प्रयुक्त किया जा सकता है। अत्यधिक उत्पादन के समय जब बाजार में आम का मूल्य कम हो जाता है उस समय आमों की स्लाइसें या चूर्ण तैयार करना बहुत ही अच्छा विकल्प माना जाता है।

ऐसी फांकें तैयार करने हेतु, पूर्णतः पके आमों का चुनाव कर उन्हें साफ पानी से धोएं। छिलके को उतार कर

स्लाइसें तैयार करें। इन स्लाइसों को 70^0 ब्रिक्स के शक्रा के घोल में ड़ालकर 2 मिनट तक 90^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म कर बाद में कमरे के सामान्य तापमान तक ठण्ड़ा करें। अब शक्रा के घोल को निकाल कर, फांकों को या तो सौर शुष्कारित्र या केबिनेट शुष्कारित्र में 58 ± 20 सेल्सियस तापमान पर 14 घण्टों तक सुखाएं। तदोपरांत फांकों को पॉलिथीन की थैलियों में पैक कर किसी शुष्क व ठण्डे स्थान पर भण्डारित करें।

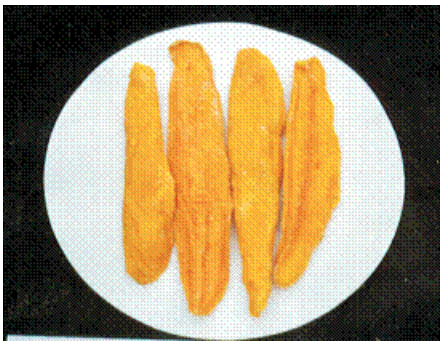

आम की निर्जलीकृत फांक

स. अपशिष्टों का उपयोग

आम की प्रसंस्करण इकाईयों द्वारा कई अपशिष्ट/उपोत्पाद उत्पादित किए जाते हैं जो कई बहुमूल्य घटकों के उच्च स्रोत होते हैं (तालिका 1)। उदाहरणार्थ आम की डिब्बाबंदी इकाई द्वारा लगभग 40–60 अपशिष्ट/उपोत्पाद पैदा होते है। इस अपशिष्ट में छिलका –15 प्रतिशत, गुठली –18 प्रतिशत एवं अनुपयुक्त गूदे की हिस्सेदारी 8 से 10 प्रतिशत होती है। इन उपोत्पादों/अपशिष्टों को पशुओं हेतु चारा तैयार करने या पेक्टिन या स्टार्च निष्कर्षण हेतु प्रयुक्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त आम के बीजों की गिरी में 7–12 प्रतिशत तेल होता है जो स्टीरियक एवं ओलियक अम्लों का उच्च स्रोत होता है। इस तेल से 'ओलिन' एवं 'स्टीयरिन' आदि बहुमूल्य पदार्थ निष्कर्षित किए जा सकते हैं जिन्हें कुछ देशों में चॉकलेट बनाने हेतु प्रयुक्त कोको मक्खन के विकल्प के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

आम की प्रसंस्करण इकाईयों से प्राप्त उपोत्पादों से तैयार किए जाने वाले विभिन्न उत्पादों का विवरण निम्नलिखित हैः

रेशा

रासायनिक निष्कर्षण द्वारा आम के छिलके से रेशा को प्राप्त करने के लिए उसे क्षार से उपचारित करके क्रमशः हाइड्रोजन–पर–ऑक्साइड व अल्कोहल में उबालते हैं। तत्पश्चात अल्कोहल से धोने के बाद शुद्ध रेशा प्राप्त होता है। शुद्ध अवस्था में यह रेशा भोज्य पदार्थ जैसे बेकिंग उत्पाद, बाल आहार तथा भोजन के साथ लिए जाने वाले पेय का रेशा मूल्य बढ़ाने में प्रयुक्त होता है। आम के छिलके से प्राप्त उच्च गुणवत्ता युक्त पैक्टिन, जैम, जैली, पुडिंग, सलाद, दुग्ध पदार्थों इत्यादि में वांछित गाढ़ापन तथा स्थायित्व लाने के लिए प्रयुक्त होता है। प्रसाधन तथा औषधि निर्माण उद्योग भी इसका उपयोग करते हैं।

अम्ल एवं सिरका

आम के छिलके से किण्वीकरण द्वारा सिट्रिक अम्ल तैयार किया जा सकता है, जिसे विभिन्न खाद्य उद्योगों में प्रयोग करते हैं। आम के छिलके से उत्तम गुणवत्ता का सिरका बनाया जा सकता है जो रंग–रूप तथा सुगंध में आम के गूदे से तैयार सिरके के समकक्ष होता है।

छिलके में प्रोटीन की मात्रा बहुत कम होती है। इसे *एस्परजिलस नाइजर* (फफूंद) अथवा बेकर यीस्ट द्वारा वातापेक्षी ठोस किण्वीकरण विधि से पांच गुणा तक बढ़ाया जा सकता है। जिससे आहार अधिक पौष्टिक हो जाता है। आम के छिलके का प्रयोग खुम्बी उत्पादन में भी किया जा सकता है।

तालिका 1: आम के प्रमुख अपशिष्टों का रासायनिक संघटन

रासायनिक घटक	छिलका	गिरी
नमी	68.5	55.0
अपरिष्कृत प्रोटीन	3.9	2.6
शक्रा	48.1	7.9
अपरिष्कृत रेशा	8.4	0.9
अपरिष्कृत वसा	–	4.2
पैक्टिन	12.8	0.8
स्टार्च	2.9	57.8

तेल

आम की गुठली को तोड़ने से गिरी प्राप्त होती है। आम की गिरी में स्टार्च बहुतायत (58 प्रतिशत) में होता है। इसे रासायनिक निष्कर्षण द्वारा शुद्ध करके आटे के रूप में अथवा औषधि निर्माण में लाया जा सकता है। आम की गिरी में काफी मात्रा में तेल पाया गया है। यह तेल खाद्य, सुगंध, रबर, प्रसाधन, पेन्ट, कन्फैक्शनरी, आईसक्रीम, कीटनाशक, कपड़ा आदि उद्योगों में प्रयुक्त होता है।

आम के तेल को आम की गिरी का वसा या 'मैंगो मक्खन' आदि नामों से जाना जाता है जिसे पके आम से प्राप्त सूखी गुठलियों की गिरियों से 'हाइड्रोलिक प्रेस' या सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन (विलायक निष्कर्षण) द्वारा निकाला जाता है। सर्वप्रथम इक्ट्ठी की गई आम की गुठलियों को अच्छी तरह से पानी द्वारा धोया जाता है। धुलाई के बाद गुठलियों को सूर्य की रोशनी में 12–15 प्रतिशत नमी तक सुखाया जाता है। सूखी गुठलियों को 'ड्रम रोस्टर' में भून कर गिरी के छिलके को या तो मशीन द्वारा या लकड़ी के डंडों से पीटकर अलग कर दिया जाता है। अब गिरी को हैमर मिल से छोटे–छोटे छुकड़ों में पीस दिया जाता है। इन पीसे हुए टुकड़ों को गोलियां/टिकिया बनाने वाली मशीन में ड़ालकर गोलियां/टिकियां बनाई जाती हैं। इन टिकियों को कूलर द्वारा ठंडा कर विलायक निष्कर्षण यंत्र में पहुंचा दिया जाता है जहां हमें आम की गुठली से तेल प्राप्त होता है। इस प्रकार प्राप्त तेल के कई लाभ हैं। इसे विशेषकर चॉकलेट बनाने हेतु 'चाको बट्टर' के स्थान पर प्रयुक्त कर सकते हैं। इस तेल के औषधीय गुण भी हैं एवं इसे युनानी एवं आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयुक्त किया जाता है। इस वसे को अन्य तेलों से मिलाकर खाद्य तेल के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं। इसे साबुन उद्योग में भी प्रयुक्त कर सकते हैं।

आम की गुठली से प्राप्त तेल

आटा

आमों की गिरी से विभिन्न प्रसंस्करण चरणों द्वारा आटा तैयार किया जा सकता है। यह आटा प्रोटीन एवं वसा का अच्छा स्रोत होता है। इसमें कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं पोटेशियम आदि पोषक तत्वों की भी अच्छी मात्रा होती है। इस प्रकार से तैयार आटे से स्टार्च एवं प्रोटीन निष्कर्षित किए जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त इस आटे की लगभग 5–10 प्रतिशत मात्रा को गेहूँ के आटे के स्थान पर चपाती आदि बनाने हेतु प्रयुक्त कर सकते हैं। इसे पशुओं हेतु चारा एवं खेत हेतु खाद तैयार करने के लिए भी प्रयुक्त कर सकते हैं। इसे कपड़ा उद्योग में आमापन एवं धुलाई हेतु, आसंजक, पेपर एवं किण्वन प्रौद्योगिकी में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

आम की गुठली से तैयार आटा

गुड़ के औषधीय गुण

मिथिलेश तिवारी, प्रियंका सिंह, राजीव रंजन राय, दिलीप कुमार एवं ए.के. सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ–226002

भारत दुनिया का प्रमुख गन्ना उत्पादक देश है और लगभग 54 प्रतिशत उपज का उपयोग गुड़ के निर्माण के लिए किया जाता है। उत्तर प्रदेश में 68 प्रतिशत और आंध्र प्रदेश में उत्पादित गन्ने का 60 प्रतिशत गुड़ उत्पादन के लिए उपयोग किया जाता है। गुड़ एक ओपन–पैन पौष्टिक स्वीटनर है जो देश में सभी के लिए आसानी से उपलब्ध है। गन्ना और गुड़ और उनसे प्राप्त उत्पाद, हमारे पूर्वजों और चिकित्सा पुरूषों द्वारा अनादि काल से बनाया जाता हैं। उन्होंने स्वस्थ समाज बनाए रखने में उनके उपयोग की आवश्यकता पर बल दिया है।

गन्ने को चबाने के बारे में,एक प्रसिद्व प्राचीन भारत आयुर्वेदिक औषधि, चरक, इस बात को बताता हैः

बृष्यः शीतः स्थिरः स्निग्धो
वृहणो मधुरो रसः।
श्लेष्मलो मक्षितस्योक्षो–
यन्त्रकस्तु विदह्मते।

चबाया हुआ गन्ने का रस भारी होता है, लेकिन वीर्य को बढ़ने के अलावा सुखदायक और शीतलता प्रदान करता है। यह कफ का निर्माण भी करता है। कोल्हू से निकाला गया रस विदही होता है महान भारतीय चिकित्सा पुरूष, ने कहा किः

टविदाही कफकरो वातपित्त निवारणः।
वक्त प्रहादनो वृष्णो दन्तं मिष्पडितो रसः।।

जो चबाया हुआ रस अविद्या है, कफ उत्प्रेरण करता है, वात (वायु,पित्त) को समाप्त करता है। रस सुखदायक प्रभाव देता है और सहज रूप से वीर्य बढ़ाता है।

चिकित्सा के रूप में गुड़ः आयुर्वेद में, गुड़ को असंख्य औषधीय गुणों से भरपूर एक पोषक तत्व माना गया है। गुड़ को रसायन कहा गया है, जो जीवन का विस्तार करता है, शरीर को रोग मुक्त करता रहता है और यौवन के खिलने को बनाए रखता है। भाव प्रकाश ने आयुर्वेदिक चिकित्सा पर एक और पुस्तक लिखी है कि अदरक के साथ गुड़ का उपयोग कफ को शांत करता है, साथ ही पित्त को खत्म करता है और सोंठ (सूखा अदरक) वात कारक के होने वाले सभी दोषों में फायदेमंद है। हरित संहिता गुड़ को क्षय (क्षयकारी रोगों), ब्रोंकाइटिस, सोरिया, कमजोरी और एनीमिया, पीलिया, आदि में सबसे अच्छा खाने के रूप में मानती है। रजनीगंटुकारा के अनुसार, गुड़ कार्डियोवोस्कुलर सिस्टम के लिए अच्छा है, वात, पित्त और कफ को शांत करता है। यह मूत्र, पथ और आंत के रोगों को समाप्त करता है अथवा एनजाइना, टोन और पाचन शक्ति में सुधार और प्रमेह को ठीक करता है। सुश्रुत संहिता के अनुसार

पित्तधनो मधुरः शुद्वो वात धनोडसूकप्रसादन।
स पुराणोडधिक गुंड़, पथ्यतमः स्मृतः।।

शुद्व गुड़ वात और पित्त को समाप्त करता है और रक्त को शुद्व करता है। पुराना गुड़ विशेष रूप से लाभकारी होता है, बच्चों के जन्म के बाद स्तनपान कराने वाली मां को दिया जाता है।

क्षेत्रीय आयुर्वेद संस्थान, लखनऊ में आयुर्वेद दिवस समारोह में, बार–बार इसकी बात की गई है कि मैंगनीज और मैग्नीशियम जैसे लाभकारी खनिजों की मौजूदगी से गुड़ के औषधीय महत्व में वृद्वि होती है और इसके लिए नियमित उपयोग से जीवनकाल में वृद्वि होती है। बुजुर्ग व्याक्यिों के लिए, चीनी के स्थान पर गुड़ का उपयोग, भोजन का एक महत्वपूर्ण आहार घटक माना जाता है, पूर्वी यूपी में एक पुरानी कहावत हैः

चैत–चना, बैशाखे– बेल,
जेठे–शयन, आषढ़े–खेल,
सावन–हर्रे, भादों–ती सी,
क्वार मास गुड़ खओ मीतः।
कतिक–मूली, अंगहन–गाजर,
पूषमाघ–करो दूध से मेल,
माघमास घी खीचड़ खाय,
फागुन उठते प्रातः नहाय।।

यह इंगित करता है कि क्वार (अक्टूबर) में गुड़ का उपयोग स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है। आमतौर पर सर्दी के दौरान तिल और मूंगफली के संयोजन में तैयार की जाने वाली चीजों का सेवन किया जाता है। ये तैयार उत्पाद रेवड़ी, गजक चिक्की, इत्यादि के नाम पर बाजार में बेचे जाते हैं।

गुड़ रोग उपचार में: गुड़ का उपयोग कुछ बीमारियों को ठीक करने के लिए जाना जाता है। आयुर्वेद द्वारा किए गए मानव रोगों के उपचार के लिए गन्ने गुड़ के कुछ उपयोगों का उल्लेख गौर (1974) और लक्ष्मण (1988) द्वारा किया जाता है। प्रासंगिक जानकारी को सम्मिलित और नीचे प्रस्तुत किया गया है।

सर्दी जुकाम: सोंठ (सूखे अदरक), हल्दी और गुड़ के काढ़े की थोड़ी मात्रा का उपयोग सर्दी–जुकाम के खिलाफ एक प्रभावी रोगनिरोधी उपाय प्रदान करता है।

सर्दी–जुकाम को निम्नलिखित तरीकें से भी ठीक किया जा सकता है:–

(अ) गुड़ की एक गोली, जिसमें पिसा हुआ हर्र और 2–4 कालीमिर्च, सुबह और शाम लेने से सर्दी–जुकाम को नियंत्रित करने में काफी फायदा होता है।

(ब) एक दिन में तीन बार समान मात्रा में सोंठ, गुड़ और मुलेठी को खाने से सर्दी–जुकाम का प्रभावी असर होता है।

(स) खराब हुए सर्दी–जुकाम को ठीक करने के लिए, 10 ग्राम गुड़, 40 ग्राम दही और 2.5 से 10 ग्राम पाउडर काली मिर्च को 3 दिनों तक रोजना सुबह लेना चाहिए।

भवसन संबंधी बीमारियाँ: 21 दिनों की अवधि के लिए प्रतिदिन शुद्व सरसों के तेल में 2.5 से 10 ग्राम गुड की मात्रा लेने से सांस की बीमारी ठीक हो जाती है। हिचकी को रोकने के लिए, सोंठ वाले पानी में गुड़ घोल की कुछ बूंदें नथुने में डालनी चाहिए।

हृदय संबंधी रोग: हृदय रोगों को ठीक करने के लिए गुड़ और शुद्व घृत की बराबर मात्रा लेना नियमित रूप से फायदेमंद है। घुटने के जोड़ों में आमवाती दर्द के लिए सुबह–शाम कुछ घी के साथ बारीक मिश्रित गुग्गुल (10 ग्राम) और गुड़ (20 ग्राम) का सेवन फायदेमंद होता है।

पाचन तंत्र का विकास: गुड़ को मीठे बेल के चूर्ण के साथ लेने से पेट के लगभग सभी रोगों में लाभ मिलता है। दस्त के लिए, अदरक या सोंठ (सूखा अदरक) या हर्र या पीपल पाउडर मिलाएं: 10 ग्राम 120 और 150 ग्राम तक लें। इसके अलावा दस्त, स्वर बैठना, सांस की परेशानी, पेट की बीमारी (एनोरेक्सिया), पुराने बुखार और बवासीर को भी ठीक करता है। 30 ग्राम बेल के गूदे, 5 ग्राम सोंठ (सूखे अदरक) और 10 ग्राम गुड़ के साथ प्रतिदिन दो या तीन बार लेने से भी दस्त में लाभ होता है। भूख न लगने की स्थिति में, 15 ग्राम गुड़ के साथ 5 ग्राम की मात्रा दो या तीन बार लेने से व्याधि समाप्त हो जाती है। रक्तातिसार के साथ दस्त में अदरक तथा बेल का पका हुआ गूदा लेकर सेवन करने से लाभ होता है।

सरदर्द: 10 ग्राम गुड़ को 5 ग्राम काले तिल में दूध के साथ अच्छी तरह से मिलाया जाता है। 5 ग्राम घी तथा सभी सामग्री को गरम किया जाता है। यह सरदर्द को ठीक करने में कार्यरत है।

गठिया: गठिया रोग को ठीक करने के लिए गुड़ और जीरा फायदेमंद है। भैंस के ताजे दूध में गुड़ मिलाकर खड़े होकर लेने के दौरान लाभ होता है। इसके आलवा, 2–3 घंटे के लिए खड़े रहना (बैठना नहीं) नाला–वात में फायदेमंद है।

शरीर में सूजन या जलन होना: पानी में गुड़ घोलकर, इसे एक साफ कपड़े से कई बार छान लें, इसे दिन में बार–बार पीने से शरीर की सूजन ठीक हो जाती है।

कीड़े के लिए: कृमि संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए, 3 ग्राम अजवाइन, 2 ग्राम बायवंडांग, 0.1 ग्राम कपूर और 5 ग्राम गुड़ लें। इनको कीड़े मारने के लिए दिन में 2 से 3 बार लेना चाहिए। यह भी देखा गया है कि केवल 0.5

ग्राम अजवाइन और 0.5 ग्राम गुड़ वाली गोलियां जब दिन में तीन बार ली जाती है, तो कीड़े भी मर जाते है।

कांटा, कांच और पत्थर की चोटः कांटो, कांच या नुकीले पत्थर के कारण हुए घावों पर मेल्ट गुड़ का प्रयोग दर्द से राहत देता है और घाव को जल्दी भर देता है।

यदि कांटे ने मांस में गहरा छेद कर दिया है, और वह आसानी से बाहर नहीं निकल रहा है, तो गुड़ और अजावइन का गर्म पोठली को उस स्थान रखा जाता है। कुछ घंटों के बाद कांटा अपने आप निकल आता है।

बालों की देखभालः रात भर मेथी के बीजों और गुड़ से बने पेस्ट को स्कैल्प पर बालों में लगांए और एक घंटे बाद बालों को धोने से बालों की चमक बढ़ती है। साथ ही यह बालों की शुष्कता को खत्म करता है। एक ही समय में यह बालों के रूखेपन को खत्म कर देता है।

मूंग : महत्वपूर्ण एवं कम समय में पकने वाली दलहनी फसल

मुरलीधर अश्की, एच के दीक्षित, ज्ञान प्रकाश मिश्रा
धर्मेन्द्र सिंह, प्राची यादव, एस के चक्रवर्ती, ज्ञानेन्द्र सिंह एवं दिलीप कुमार
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

मूंग भारत में उगायी जाने वाली प्राचीनतम एवं कम समय मे पकने वाली महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। इस फसल में वातावरणीय नाइट्रोजन को पौधों द्वारा ग्रहण करने योग्य बनाने की अद्भुत क्षमता होती हैं, जिससे पौधों को कम उर्वरक की आवश्यकता पड़ती है, इससे उत्पादन लागत कम हो जाती है। इसकी खेती लगभग सभी राज्यों मे की जाती है परन्तु महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु एवं उड़ीसा, मूंग तथा उड़द उत्पादन के प्रमुख राज्य हैं।

भूमि की तैयारी

मूंग की खेती के लिए दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। भूमि में जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या डिस्क हैरो चलाकर करनी चाहिए तथा फिर एक क्रॉस जुताई हैरो से एवं एक जुताई कल्टीवेटर से करने के पश्चात् पाटा लगाकर भूमि को समतल कर देना चाहिए।

बीज की बुवाई

मूंग की बुवाई 15 जुलाई तक कर देनी चाहिए। देरी से वर्षा होने पर शीघ्र पकने वाली किस्म की बुवाई 30 जुलाई तक की जा सकती है। बुवाई के लिए स्वस्थ एवं अच्छी गुणवत्ता तथा उपचारित बीज का प्रयोग करना चाहिए। बुवाई कतारों में करनी चाहिए। कतारों के बीच की दूरी 45 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. होनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

दलहन फसल होने के कारण मूंग को कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। मूंग के लिए 20 किलो नाइट्रोजन तथा 40 किलो फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की पूर्ति हेतु प्रति हेक्टेयर 87 किलोग्राम डी.ए.पी. एवं 10 किलोग्राम यूरिया की मात्रा बुवाई के समय देनी चाहिए। मूंग की खेती हेतु खेत में दो से तीन वर्षों में एक बार 5 से 10 टन गोबर या कम्पोस्ट खाद देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ को गर्म करते हैं तथा ठंडा होने के बाद 600 ग्राम राइजोबियम कल्चर मिलाकर इससे बीज को उपचारित कर छाया में सुखाकर बुवाई के लिए प्रयोग करना चाहिए। खाद एवं उर्वरकां के प्रयोग से पहले मिट्टी की जाँच कर लेनी चहिए।

खरपतवार नियंत्रण

फसल की बुवाई के 48 घंटे के दौरान पेन्डीमेथलिन (स्टॉम्प) की 3.30 लीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। फसल जब 25–30 दिन की हो जाये तो एक गुड़ाई खुरपी/कसौला से कर देनी चहिए या इमेंजीथाइपर (परसूट) की 750 मी.ली. मात्रा प्रति हेक्टयर की दर से पानी में घोल बनाकर बुवाई के 20–30 दिन बाद छिड़काव कर देना चाहिए।

रोग तथा कीट नियंत्रण

दीमक

दीमक फसल के पौधों की जड़ों को खाकर नुकसान पहुंचाती है। बुवाई से पहले अंतिम जुताई के समय खेत में क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या क्लोरोपाइरिफॉस पाउडर की 20–25 किलो ग्राम मात्रा प्रति हेक्टयर की दर से मिटटी में मिला देनी चाहिए। बुवाई के समय बीज को क्लोरोपाइरिफॉस कीटनाशक की 2 मि.ली. मात्रा को प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

कातरा

कातरा का प्रकोप विशेष रूप से दलहनी फसलों में बहुत होता है। इस कीट की लट पौधों को आरम्भिक

अवस्था में काटकर बहुत नुकसान पहुंचती है। इसके नियंत्रण हेतु खेत के आस–पास कचरा नहीं होना चाहिये। कतरे की लटों पर नियंत्रण हेतु क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत पाउडर की 20–25 किलो ग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव/छिड़काव कर देना चाहिए।

मोयला, सफेद मक्खी एवं हरा तेला

ये सभी कीट मूंग की फसल को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यू ए.सी या मिथाइल डिमेटॉन 25 ई.सी. 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार दोबारा छिड़काव किया जा सकता है।

पत्ती बीटल

इस कीट के नियंत्रण के लिए क्यूनोफॉस 1.5 प्रतिशत पाउडर को 20–25 किलो ग्राम पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फली छेदक

फली छेदक को नियंत्रित करने के लिए मोनोक्रोटोफॉस आधा लीटर या मैलाथियोन या क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत पॉउडर की 20–25 किलो हेक्टयर की दर से छिड़काव/भुरकाव करना चाहिए। आवश्यकता होने पर 15 दिन के अंदर दोबारा छिड़काव/भुरकाव किया जा सकता है।

रस चूसक कीड़े

मूंग की पतियों, तनों एवं फलियों का रस चूसकर अनेक प्रकार के कीड़े फसल को हानि पहुंचाते हैं। इन कीड़ों की रोकथाम हेतु एमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल का 500 मी.ली. मात्रा का प्रति हेक्टयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्कता होने पर दूसरा छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर करें।

चीत्ती जीवाणु रोग

इस रोग के लक्षण पत्तियों, तने एवं फलियों पर छोटे गहरे भूरे धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। इस रोग की रोकथाम हेतु एग्रीमाइसीन 200 ग्राम या स्टेप्टोसाईक्लीन 50 ग्राम को 500 लीटर में घोल बनाकर प्रति हेक्टयर की दर से छिड़काव करना चाहिए ।

पीत शिरा मोजेक

इस रोग के लक्षण फसल की पतियों पर एक महीने के अंतर्गत दिखाई देने लगते हैं। फैले हुए पीले धब्बे के रूप में रोग दिखाई देता है। यह रोग मक्खी के कारण फैलता है। इसके नियंत्रण हेतु मिथाइल दिमेटॉन 0.25 प्रतिशत व मैलाथियॉन 0.1 प्रतिशत मात्रा को मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से 10 दिनों के अंतराल पर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना काफी प्रभावी होता है।

तना झुलसा रोग

इस रोग की रोकथाम हेतु 2 ग्राम मैंकोजेब से प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए। बुवाई के 30–35 दिन बाद 2 किलो मैंकोजेब प्रति हेक्टयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

पीलिया रोग

इस रोग के कारण फसल की पत्तियों में पीलापन दिखाई देता है। इस रोग के नियंत्रण हेतु गंधक 0.5 प्रतिशत या फैरस सल्फेट का छिड़काव करना चाहिए।

सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा

इस रोग के कारण पौधों के ऊपर छोटे गोल बैंगनी लाल रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। पौधों की पत्तियां, जड़ें व अन्य भाग भी सूखने लगते हैं। इस के नियंत्रण हेतु कार्बेन्डाजिम की 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए। बीज को 3 ग्राम केप्टान या २ ग्राम कार्बेन्डाइजिम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

क्रिंकल विषाणु रोग

इस रोग के कारण पौधे की पत्तियां सिकुड़ कर इकट्ठी हो जाती है एवं पौधे पर फलियां बहुत ही कम बनती हैं। इसकी रोकथाम हेतु डाइमिथोएट 30 ई.सी. आधा लीटर अथवा मिथाइल डीमेटोन 25 ई.सी.750 मि.ली.प्रति हेक्टयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। जरूरत पड़ने पर 15 दिन बाद दोबारा छिड़काव करना चाहिए।

जीवाणु पत्ती धब्बा, फफुंदी पत्ती धब्बा और विषाणु रोग

इन रोगों की रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम, सरेप्टोसाइलिन की 0.1 ग्राम एवं मिथाइल डेमेटॉन 25 ई. सी. की एक मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में एक साथ मिलाकर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।

फसल चक्र

अच्छी पैदावार प्राप्त करने एवं भूमि की उर्वरा षक्ति बनाये रखने हेतु उचित फसल चक्र आवश्यक है। वर्षा आधारित खेती के लिए मूंग–बाजरा तथा सिंचित क्षेत्रों में मूंग–गेहूं/जीरा/सरसों फसल चक्र अपनाना चाहिए।

बीज उत्पादन

मूंग के बीज उत्पादन हेतु ऐसे खेत चुनने चहिये जिनमें पिछले मौसम में मूंग नहीं उगाया गया हो। मूंग के लिए निकटवर्ती खेतों से संदुशण को रोकने के लिए फसल के चारों तरफ 10 मीटर की दूरी तक मूंग का दूसरा खेत नहीं होना चाहिए। भूमि की अच्छी तैयारी उचित खाद एवं उर्वरकां का प्रयोग, खरपतवार, कीड़े एवं बिमारियों के नियंत्रण हेतु साथ–साथ समय–समय पर अवांछनीय पौधों को निकालते रहना चाहिए एवं फसल पकने पर लाटे को अलग सुखाकर दाना निकाल कर ग्रेडिंग कर लेना चाहिए। बीज को साफ करके उपचारित कर सूखे स्थान में रख देना चाहिए। इस प्रकार उगाए गए बीज को अगले वर्ष बुवाई के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

कटाई एवं गहाई

मूंग की फलियां जब काली होकर सूखने लगें तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। अधिक सूखने पर फलियों के चटकने का डर रहता है। फलियों से बीज को थ्रेसर द्वारा या डंडे द्वारा अलग कर लिया जाता है ।

मुंगबिन के उच्च उत्पादन के लिए प्रौद्योगिकी सूची

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित मूंग किस्में तथा उत्पादन प्रौद्योगिकी

क्र.सं.	प्रजाति	वर्श	औसत उपज (किग्रा./हे.)	उपयुक्ता
1.	पूसा विशाल	2001	1100–1200	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र (वसंत ऋतु)
2.	पूसा –9531	2001	1100–1200	उत्तर–पश्चिमी मैदानी व मध्य क्षेत्र (वसंत व ग्रीष्म ऋतु)
3.	पूसा रत्ना	2005	1100–1200	राश्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (खरीफ)
4.	पूसा–0672	2010	1000–1100	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र (खरीफ)
5.	पूसा–1371	2017	900–1321	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र (खरीफ)
6.	पूसा–1431	2018	1250–1350	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (खरीफ)

उत्पादन प्रौद्योगिकी

क्र.सं.	विवरण	अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उपाय
1.	खेत का चयन व तैयारी	समतल दोमट भूमि मूंग के लिए उपयुक्त है।
2.	बीज शोधन	बीज शोधन के लिए थीराम/कैप्टान/कारबेंडाजिम / 3.0 ग्रा./किग्रा. बीज से 4–5 दिन पूर्व शोधन करना चाहिए।
3.	बुवाई का समय	वंसत ऋतु : 10–25 मार्च ग्रीष्म ऋतु : 20 मार्च से 5 अप्रैल खरीफ ऋतु : 20 जुलाई से 5 अगस्त
4.	बीज दर/बुवाई की विधि	बड़े दाने की किस्म 25 किग्रा./हे. तथा छोटे दाने की किस्म 20 किग्रा./हे., पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी.
5.	उर्वरक	100 किग्रा. डी.ए.पी., 25 जिंक सल्फेट तथा 5 टन गोबर की खाद

6.	खरपतवार नियंत्रण	शुरू में 25–30 दिन खरपतवार मुक्त खेत के लिए पेंडीमिथीलीन 1 ली./हे. की दर से बुवाई के तुरंत बाद छिड़काव करें।
7.	बीमारी व कीट नियंत्रण	सफेद मक्खी नियंत्रण हेतु इमिडाक्लारोपिड 0.2 मि.ली./ली. पानी की दर से बुवाई के 20 व 25 दिन के बाद छिड़काव करें।
8.	सिंचाई	खेत की तैयारी पूर्व पलेवा करें, वसंत व ग्रीष्म ऋतु में आवश्यकता अनुसार दो से तीन सिंचाई करें। पहली सिंचाई बुवाई से 20–25 दिन बाद करें। खरीफ में सिंचाई यदि आवश्यक हो तो करें।

मूंग की संस्तुत किस्में:

क्र. स.	प्रजाति	संस्तुत क्षेत्र	पकने की अवधि (दिन)	औसत उपज (क्विं./है.)	रोगरोधिता	अन्य गुण
1.	पूसा 9531	मध्य क्षेत्र	60	11–12	पीली चितेरी रोग के प्रतिरोधी	ग्रीष्म ऋतु में उपयुक्त
2.	पूसा विशाल	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	62	11–12	''	इसका दाना बड़ा होता है
3.	गंगा 8	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	72	9.2	''	खरीफ में
4.	ओ.यू.एम. 11–5	दक्षिणी क्षेत्र	62	7.3	''	''
5.	एच.यू.एम. 2	उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड	67	10.5	''	जायद एवं ग्रीष्म में
6.	एच.यू.एम. 6	उत्तर प्रदेश	68	10.0	''	जायद में
7.	एच.यू.एम. 12	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र	62	11.2	''	ग्रीष्म में
8.	मेहा	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र	66	9.8	''	जायद में
9.	टी.एम.बी. 37	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र	65	11.0	''	ग्रीष्म में
10.	सी.ओ.जी.जी. 912	दक्षिणी क्षेत्र	62	8.0	''	खरीफ में
11.	एच.यू.एम. 16	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र	58	10.9	''	ग्रीष्म में
12.	एच.एम. 2–15	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	67	10.5	''	खरीफ में
13.	पन्त मूंग 6	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र	96	10.5	''	''
14.	के.एम. 2241	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र	70	11.0	''	''
15.	आई.पी.एम. 02–03	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	68	11.0	''	खरीफ एवं जायद में, बड़ा दाना
16.	पी.के.वी.ऐ.के. एम. 4	मध्य एवं दक्षिणी क्षेत्र	66	10.0	''	खरीफ में

17.	पूसा 0672	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र	64	10–11	''	''
18.	आई.पी.एम. 02–14	दक्षिणी क्षेत्र	65	11.0	''	जायद एवं ग्रीष्म में
19.	डी.जी.जी.वी. 2	कर्नाटक	75	14.0	चुर्णिल आसिता मध्यम प्रतिरोधी	खरीफ में
20.	एम.एच. 421	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	60	10.0–12.0	पीली चितेरी रोग के प्रतिरोधी	जायद एवं ग्रीष्म में
21.	पूसा 1371	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र	91	9–13	बहु रोग प्रतिरोधी	खरीफ
22.	षिखा	मध्य क्षेत्र	70	12.0	पीली चितेरी रोग के प्रतिरोधी	जायद एवं ग्रीष्म में
23.	विराट	सम्पूर्ण भारत	56	11.0	''	जायद एवं ग्रीष्म में
24.	एस.एम.एल. 1115	उत्तर– पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र	70	12.0	मध्यम प्रतिरोधी	ग्रीष्म में

बेलदार सब्जियों की खेती

गोगराज सिंह जाट, जोगेंद्र सिंह एवं बी एस तोमर
शाकीय विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प–भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली–110012

बेलदार सब्जियाँ गर्मी तथा खरीफ के मौसम में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसले हैं। बेलदार सब्जियों में आवश्यक विटाामिन व खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। करेले में पाये जाने वाला चेरेटीन नामक रासायनिक पदार्थ शुगर के रोगियों के लिये बहुत ही लाभदायक होता है। खीरे का प्रयोग सलाद के रूप में किया जाता है जो गर्मियों में शरीर को ठंडक प्रदान करता है। तरबूज में पाये जाने वाला लाइकोपीन, आघात और ह्रदय रोगों के जोखिम को कम करने के साथ–साथ रक्तचाप को सामान्य बनाये रखने और रक्त कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में भी सहायक होता है। कद्दू में विटामिन–ए की प्रचुर मात्रा होती है जो रतोंधी रोग के प्रति सहायक होता है। बेलदार फसलों के सफल उत्पादन के लिये इन फसलों को विभिन्न प्रकार के जैविक तनावों मुख्यतः इनमें लगने वाले हानिकारक कीटो वं बीमारियों के प्रकोप से बचाना भी अति आवश्यक होता है।

भूमि का चयन व तैयारी: बेलदार फसलों को विभिन्न प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परंतु मृदा रेतीली–दोमट, पी. एच. मान 6.0 से 6.5 तथा उच्च कार्बनिक पदार्थ युक्त व उपजाऊ होनी चाहिए। 20–25 टन अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद खेत तैयारी से 25–30 दिन पहले खेत में डालनी चाहिए। मिट्टी परीक्षण के अनुसार सूक्ष्म तत्वों का इस्तेमाल करें। खेत समतल और भुरभुरा तथा ढेलों, खरपतवारों और पुरानी फसल के अवशेषों से मुक्त होने चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से बाद में 3–4 जुताई देशी हल से करे एवं पाटा चला कर खेत को समतल तथा भुरभुरा बना लेते हैं।

पौध तैयार करना: बेलदार फसलों की अगेती खेती के लिए प्लग ट्रे में जनवरी के माह में पौध तैयार कर सकते हैं। प्लग ट्रे जिनके एक खांचे की (1–5 इंच साइज) आयतन मात्रा 18–20 घन हो उनमे कोकोपीट, वर्मीकुलाइट और परलाइट का 3:1:1 भाग का मिश्रण बनाकर ट्रे में भर लें व बीजों की बुवाई 1 से. मी. गहराई पर करें। बीज की बुवाई करने के पश्चात प्लग ट्रे पर वर्मीकुलाइट की परत चढ़ा दें और हल्के पानी का छिड़काव करे। नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम (20 : 20 : 20 ग्रेड) का 100–150 मिली ग्राम प्रति लीटर पानी घोल बनाकर 2–3 दिन अन्तराल पर प्लग ट्रे में छिड़काव करें। पौध बुवाई से 25–28 दिनों में रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

पॉली हाउस से करें अगेती खेती: उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में गर्मी के मौसम के लिए बेलदार सब्जियों की अगेती फसल तैयार करने के लिए जनवरी माह में छोटे आकार का पॉली हाउस बनाकर पौध तैयार कर लेते हैं। पौधे तैयार करने के लिए 15 × 10 सें. मी. आकार की पॉलीथीन की थैलियों में 1:1:1 मिट्टी, बालू व गोबर की खाद भरकर लगभग 1 सें. मी. की गहराई पर बीज की बुवाई करके बालू की पतली परत बिछा लेते हैं तथा हजारे से पानी लगाते हैं। लगभग 4 सप्ताह में पौधे खेत में रोपाई के लिए तेयार हो जाती है। फरवरी माह में जब पाला पड़ने का डर समाप्त हो जाये तो पॉलीथीन की थैली को ब्लेड से काटकर हटाने के बाद पौधे की मिट्टी के साथ खेत में बनी नालियों की मेड़ो पर रोपाई करके पानी लगाये।

सीधी बीज बुवाई: गर्मी की फसल के लिए मध्य फरवरी का समय तथा वर्षा के मौसम में जून के अन्त से जुलाई माह कद्दूवर्गीय सब्जियों की बुवाई के लिए सर्वोतम होता हैं। खेत में लगभग 45 सें. मी. चौड़ी तथा 30–40 सें. मी. गहरी नालियां बना लें। बुवाई से पहले नालियों में पानी लगा दें। जब नाली में नमी की मात्रा बीज बुवाई के लिए

उपयुक्त हो जाये तो इन नालियों में हिल बनाकर मिट्टी भुरभुरी करके बीज बोए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी तथा पौधे से पौधे की दूरी सारणी 1 में दिए अनुसार करे।

खाद व उर्वरक प्रयोगः कच्ची गोबर की खाद का प्रयोग इन फसलों के लिए नहीं करना चाहिए क्योंकी इनका प्रयोग करने से मृदा में दीमक का प्रकोप अधिक हो जाता है। बेल वाली सब्जियों में खेत की तयैारी के समय 15–20 टन/हेक्टेयेर गोबर की अच्छी तरह से सड़ी हुई खाद व 80 कि. ग्रा. नत्रजन, 60 कि. ग्रा. फॉस्फोरस तथा 60 कि. ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है। फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा व नत्रजन की आधी मात्रा खेत की तयारी के समय डालनी चाहिए। शेष नत्रजन की मात्रा दो बार टॉप ड्रेसिंग के द्वारा बुवाई के 30 व 45 दिनों बाद खेत में दें। खाद व उर्वरक का प्रयोग सारणी–1 में दी गयी मात्रा के अनुसार करना चाहिए।

सिंचाईः सामान्यतः गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली बेलदार सब्जियों में 5–7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिये तथा खरीफ मौसम में नमी की कमी हो सिंचाई करनी चाहिये। बूंद–बूंद सिंचाई विधि भी इन फसलों में इस्तेमाल की जाती है, जिससे पानी में घ्ाुलनशील उर्वरक (एन. पी. के. 19:19:19) भी सिंचाई के साथ अच्छी बढ़वार व अधिक उपज लेने के लिए दिये जा सकते हैं। इसके लिए बीजों की बुवाई उठी हुई क्यायरियों में करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः बेलदार सब्जी फसलों की अच्छी बढ़वार व अधिक उपज के लिए आरंभिक अवस्था में खरपतवारों का नियंत्रण करना आवश्यक है। क्यों की खरपतवार खेत से पानी, प्रकाश व पोषक तत्वों के लिए मुख्य फसल से प्रतियोगिता करते हैं। साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीट व बिमारियों को भी शरण देते हैं जिससे उपज में गिरावट आ जाती है। खरपतवार शुरु के 4–6 सप्ताह में अधिक नुकसान करते हैं। पहली दो सिंचाई के बाद हल्की निराई गुडाई करके इनको निकाला जा सकता है। पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 400 मि. ली. को 200 ली. पानी में घोलकर प्रति एकड़ रोपाई से पहले छिड़काव करें।

सारणी–1 बेलदार सब्जी फसलों की कृषि क्रियाये

फसल	तापमान (° सें. ग्रे)	आवश्यक मर्दा	बीज दर (है.)	फसल अंतरण	खाद व उर्वरकां की निर्धारित मात्रा (है.)	कटाई
करेला	25–30	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7	4–6 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 1.5–2.5 मी. पौधे से पौधे– 0.5 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. पोटाश	बुवाई के 50–60 दिनों के बाद जब फल कोमल अवस्था में हो
लौकी	24–27	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 5.5–6.8	3–5 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 3 मी. पौधे से पौधे– 0.5 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 40–50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20–40 कि.ग्रा. पोटाश	बुवाई के 60–70 दिनों के बाद जब फल कोमल अवस्था में हो
खीरा	18–24	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 5.5–6.8	2.5–3.5	पंक्ति से पंक्ति– 1.5 मी. पौधे से पौधे– 30–45 सें.मी.	15–20 टन गोबर की खाद 40–50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 100 कि.ग्रा. पोटाश	फल जब किस्मों के अनुरूप लम्बे तथा कोमल अवस्था में हों
खरबूज	20–25	बलुई दोमट पी. एच. 6.5–7	2.5–3.5 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 2.5 मी. पौधे से पौधे– 0.5 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 50–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40–80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20–40 कि.ग्रा. पोटाश	जालीदार किस्मों में जाली का भाग हरा तथा जाली का रंग मटमैला सफेद होने पर एवं फल लता के डंठल से आसानी से अलग होने पर
तरबूज	24–27	बलुई दोमट पी.एच. 6.5–7	4–5 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 2.5 मी. पौधे से पौधे– 0.5 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 50–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50–100 कि.ग्रा. पोटाश	फलों को थपथपाने पर मन्द आवाज के आने पर, फल के सबसे निकटतम स्तम्भ के सूख जाने पर

कद्दू	18–30	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6.5–7.5	6–8 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 2–3 मी. पौधे से पौधे– 0.6–1.5 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 60–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 60–80 कि.ग्रा. पोटाश	बुवाई के 75–180 दिनों के बाद जब फल का डंठल सूख जाये एवं फल रंग पीला या नारंगी हो
तोरई	24–27	दोमट या बलुई दोमट, पी.एच. 6–7	4–5.5 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 2.5 मी. पौधे से पौधे– 0.4–0.5 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. पोटाश	बुवाई के 60–90 दिनों के बाद या जब फल कोमल अवस्था में हो
पेठा	24–30	दोमट या बलुई दोमट पी.एच. 6–7.5	5–7 कि.ग्रा.	पंक्ति से पंक्ति– 1.5–2.5 मी. पौधे से पौधे– 0.6–1.2 मी.	15–20 टन गोबर की खाद 40–60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 60–80 कि.ग्रा. पोटाश	बुवाई के 90–100 दिनों के बाद जब फल पूरी तरह पक जाये तथा फलों से राख सतह हटना शुरु हो जाये

बेलदार सब्जियों की उन्नत किस्में व संकर किस्में:

करेला:

पूसा औषधि: फल हल्के हरे रंग के तथा 7–8 लगातार धारियां होती हैं। फल बुवाई के 50 से 55 दिनों बाद तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। औसत फल लम्बाई 16.5 सैमी, फल भार 85 ग्राम तथा पैदावार 15–19 टन/हे है। मादा: नर पुष्प अनुपात 3:1, जो कि व्यवसायिक किस्म पूसा दो मौसमी के 1:9 की तुलना में अधिक होता हैं। यह किस्म बागवानी फसल अनुमोदन केन्द्रीय उप–समिति द्वारा वर्ष 2015 में राजस्थान, गुजरात, हरियाणा और दिल्ली प्रदेशों में खेती के लिए अनुमोदित की गई है।

पूसा पूर्वी: यह किस्म छोटे फल वाली व भरवां व्यंजन बनाने के लिए उपयुक्त है। फल आकर्षक, गहरे हरे रंग वाले, आकार में छोटे (4–5 सेंमी लम्बे व 3–4 सें. मी. व्यास आकार में) व मोटे होते हैं। उपज 8.8 टन/हैक्टयर हैं।

पूसा रसदार: यह संरक्षित खेती में अति शीघ्र (41–45 दिन में प्रथम फल तुड़ाई के लिए तैयार) फल देने वाली किस्म हैं। यह किस्म उपज व गुणवत्ता में वर्तमान प्रजातियों से बेहतर हैं। इसके फल रसदार, आकर्षक, गहरे हरे रंग वाले, त्रिकोणाकार वांछनीय बिक्री योग्य वाले हैं। फल चिकनी कोमल त्वचा वाले व मांसल होने के कारण उत्पादकों को अत्यधिक स्वीकार्य हैं। कीड़ों से रहित जालीदार में फल का औसत वजन 110 ग्राम व इसकी औसत उपज 4.54 क्वि./हैक्टयर पायी गई हैं जबकि पॉली हाउस में 4.07 क्वि./हैक्टयर उपज प्राप्त हो जाती हैं।

पूसा हाइब्रिड–1: फल मध्यम लंबाई व मोटाई वाले, चमकदार, हरे, अचार तथा सुखाने के लिए उपयुक्त। पहली कटाई 55–60 दिनों में, जायद में बुवाई के लिए उपयुक्त, पैदावार 200 क्वि०/हे०।

पूसा हाईब्रिड–2: यह संकर प्रजाति अर्द्ध–आर्द्रता सतलुज–गंगा एल्यूवियल मैदानों (पंजाब, हरियाणा दिल्ली तथा उत्तर प्रदेश) में खेती हेतु संस्तुति की गई।

पूसा दो मौसमी: फल लगातार ढलाव वाले, मध्यम लंबे, जायद तथा बरसात के मौसम में उपयुक्त, 55–60 दिनों में पहली कटाई, पैदावार 130 क्वि0/हे0।

पूसा विशेष: फल मध्यम लंबाई वाले, चमकदार, हरे, जायद मौसम में उपयुक्त, बेल छोटी इसलिए क्षेत्रफल के लिहाज से अधिक फल लगते हैं। 55–60 दिनों में पहली कटाई, पैदावार 150 क्वि0/हे0।

खीरा:

पूसा उदय: उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में व्यावसायिक खेती के लिए खीरे की पहली उन्नत प्रजाति है। फल हल्के हरे, रोयें रहित, चिकने, मध्यम आकार, 13–15 सें.मी. लंबे तथा पतले छिलके वाले हैं। पहली तुड़ाई लगभग 50 दिनों में की जाती है। औसत उपज 15–16 टन/हे.। वसंत–ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतुओं में उगाने के लिए उपयुक्त है।

पूसा बरखा: फल हरे रंग के साथ सफेद धारियों युक्त, आकर्षक व 12–15 सें. मी. लम्बे होते हैं। उत्तर भारतीय मैदानों के लिए खरीफ में जल्दी तैयार होने वाली उन्त

किस्म हैं। यह किस्म मृदुरोमिल आसिता के प्रति सहनशील हैं तथा बुवाई के 40–45 दिन बाद पहली तुड़ाई आरम्भ हो जाती है। खरीफ ऋतु में औसत उपज 18.8 टन/हे. हैं। यह किस्म बागवानी फसल अनुमोदन केन्द्रीय उप–समिति द्वारा वर्ष 2016 में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में खेती के लिए अनुमोदित की गई है।

पूसा बीज रहित खीरा–6: संरक्षित खेती के लिए अतिशीघ्र (40–45 दिन में) तुड़ाई के उपयुक्त पार्थेनोकार्पिक (बीजरहित) गायनोडायसियस खीरा की पहली प्रजाति है। नवम्बर से मार्च के लिए अधिक उपयुक्त है। फल आकर्षक, एक समान, गहरे हरे, चमकदार, बेलनाकार, सीधे, हल्के उभारयुक्त, दानों तथा कांटे रहित, कोमल त्वचा युक्त व कुरकुरे होते हैं। औसत लंबाई 14–24 सें.मी. चौड़ाई 3.45 सें.मी. तथा वजन 105 ग्रम होता है। औसत उपज 126 टन/हेक्टेयर (1260 कि.ग्रा./100 वर्ग मीटर पॉली हाउस) होती है।

पन्त शंकर खीरा: बुवाई के 50 दिन बाद पहली तुड़ाई आरम्भ हो जाती है। फल मध्यम आकार के (20 सें.मी. लम्बे) तथा हल्के हरे रंग के होते हैं। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में तथा पहाड़ी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। पैदावार 300–400 क्वि./हे.।

पेठा:

पूसा उज्जवल: भारतीय कृषि अनुसधान संस्थान की पेठा की पहली उन्नत प्रजाति है। फल आयताकार, बेलनाकार, मध्यम आकार के, सफेद व हल्के हरे रंग के, गुदा सफेद, औसत फल भार 7 कि. ग्रा. तथा आसानी से पैकिंग तथा दूर ले जाने के लिए उपयुक्त होते हैं। औसत पैदावार 45.0 टन/हे.। सब्जी बनाने के अलावा 'पेठा' मिठाई बनाने के लिए उपयुक्त हैं। इस प्रजाति की व्यावसायिक खेती मैदानी भागों मे ग्रीष्म व वर्षा ऋतुओं में सफलतापूर्वक की जा सकती है।

पूसा सब्जी पेठा: इस किस्म को अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (सब्जी फसलें) द्वारा जोन–8 (कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल) हेतु खरीफ की खेती के लिए अनुमोदित की गई है। फल बेलनाकार होते हैं और इन का लंबी दूरी तक परिवहन किया जा सकता है। फल पकने के लिए 100–110 दिन की आवश्यकता होती है। इसके फलों में सफेद गुदा होता है तथा गुदे की औसत मोटाई 6.40 सें.मी. होती है। औसत उपज 36.5 टन/है. तथा औसत फल वजन 3.5 कि .ग्रा होता है।

काशी धवल: यह अप्रैल से लेकर जुलाई के प्रथम सप्ताह तक बुवाई के लिए उपयुक्त है, फल बेलनाकार, हल्के हरे रंग के, गूदा सफेद, औसत फल भार 12 कि. ग्रा.। फल पकने के लिए 100–110 दिन की आवश्यकता होती है। फल में गुदा अधिक होने के कारण यह पेठा बनाने के लिए उपयुक्त है। औसत उपज 60 टन/है. है।

काशी उज्वल: यह अप्रैल से लेकर जुलाई के प्रथम सप्ताह तक बुवाई के लिए उपयुक्त है, फल गोल, गूदे की औसत मोटाई 7 से.मी., औसत फल भार 10–12 कि. ग्रा., एक पौधे में 3–4 फल लगते हैं। यह पेठा बनाने के लिए उपयुक्त है। औसत उपज 55–60 टन/है. है। फल पकने के लिए 100–120 दिन की आवश्यकता होती है।

चिकनी तोरी:

पूसा स्नेहा: फल गहरे हरे व कड़े छिलके वाले होते हैं जो दूर ले जाने के लिए उपयुक्त हैं। फल मध्यम लम्बे (20–25 सेंमी), गहरे हरे रंग के तथा काले हरे रंग की धारी लिए, चिकने तथा लगभग सीधे होते हैं। यह प्रजाति गर्मी में अधिक तापक्रम के लिए सहनशील है। इस प्रजाति की पहली तुड़ाई 40–50 दिनों में हो जाती है। औसत उपज 12.0 टन/हे.। यह प्रजाति खेती के लिए वसंत–ग्रीष्म व वर्षा ऋतुओं के लिए उपयुक्त है।

पूसा सुप्रिया: बेल छोटी, फल हरे, चिकने, प्रत्येक बेल में 12–16 फल, जायद तथा वर्षा ऋतु में बुवाई हेतु उपयुक्त, गर्मियों में 50–53 दिनों तथा वर्षा ऋतु में 45 दिनों में पहली फसल तैयार। पैदावार 140 क्वि./हे.।

पुसा चिकनी: अगेती, पुष्पन 60 दिनों में, फल चिकने, हरे। सिर्फ वर्षा ऋतु के लिए उपयुक्त । औसत उपज 90–100 क्वि./है.।

काशी दिव्या: फल हल्के हरे, बेलनाकार, 22–25 सेंमी

लम्बे होते हैं। इस प्रजाति की पहली तुड़ाई 40–50 दिनों में हो जाती है। यह किस्म मृदु रोमिल आसिता एवं एन्थ्रेकनोज के प्रति सहनशील है। औसत उपज 130–160 क्वि./है.।

धारीदार तोरई:

पूसा नसदार: फल हल्के हरे, नुकीले, प्रत्येक बेल में 10–12 फल, वर्षा ऋतु के लिए अधिक उपयुक्त। औसत उपज 110–120 क्वि./है.।

पूसा नूतन: बसंत–ग्रीष्म तथा खरीफ दोनों मौसमों के लिए उपयुक्त है। फल लंबे (25–30 सें.मी.), सीधे, बहुकोणीय और पतली गर्दन के आकर्षक, हरे, कोमल गूदेदार व 105 ग्राम/फल भार वाले होते हैं। खरीफ तथा बसंत–ग्रीष्म मौसम में पहली कटाई क्रमशः 45–50 दिन व 55–60 दिन में प्राप्त होती है। औसत पैदावार बसंत–ग्रीष्म व खरीफ मौसम में क्रमशः 18.5 टन/हेक्टेयर व 17.5 टन/हेक्टेयर होती है। यह तोरई के पीले चित्ती विषाणु रोग के प्रति खेत–सहिष्णु किस्म है।

काशी कुशी: यह सतपुतिया की अधिक उत्पादन देने वाली किस्म है। फल हल्के हरे, 10 गहरी धरियां फल पर पाई जाती हैं। प्रति पोधे लगभग 104 फल लगते हैं जो की 5–6 के गुच्छो में आते हैं।

चप्पन कद्दू:

पूसा पंसद: फल आकर्षक, मुलायम परत, हल्के हरे, चमकदार, एक समान चपटे गोलाकार व 70–80 ग्रा. वजन के होते हैं। बंसत ऋतु में फल 40–45 दिनों में पहली तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। जाड़े में औसत उपज खुले खेतों में, स्वाभाविक रुप से हवादार पॉलीहाउस व कम उंचाई की प्लास्टिक सुंरग में क्रमशः 16.3, 24.1 व 22.9 टन/हैक्टयर होती है। यह किस्म उत्तर भारतीय मैदानों में बंसत में खुले व सर्दियों में संरक्षित खेती के लिए उपयुक्त है।

पूसा अलंकार: अति अगेती तथा उच्च पैदावार, संकर किस्म, हल्के रंग की धारियों के साथ फल गहरे हरे, 25–30 सें. मी. लंबे, तने के सिरे की ओर हल्के पतले, इकहरे तथा स्वादिष्ट।

लौकी:

पूसा नवीन: फल बेलनाकार, 30–35 सें.मी. लम्बे, वजनदार व हरे रंग के होते हैं। ग्रीष्म तथा खरीफ दोनों मौसमों में बुवाई के लिए उपयुक्त। फल तुड़ाई के लिए बुवाई से 50–60 दिनों में तैयार हो जाते हैं। औसत पैदावार 25.0–30.0 टन/हे., खरीफ मौसम में ट्रेलिंग द्वारा इसकी खेती करने पर उपज में बढ़ोतरी होती है। यह निर्यात के लिए उपयुक्त है साथ ही दूरस्थ स्थानों पर पैंकिग करके आसानी से भेजा जा सकता है।

पूसा संदेश: फल आकर्षक गोल, गहरे हरे व मध्यम आकार के होते हैं। जायद ग्रीष्म व खरीफ दोनों में अच्छी पैदावार देती है। फलों का औसत भार 600 ग्राम व उपज 320 कुं. /हेक्टेयर होती है।

पूसा संकर–3: फल हरे, सीधे, लंबे व हल्के गदा रूप होते हैं तथा सुगम पैकिंग व दूर तक ले जाने के लिए उपयुक्त होते हैं। फल तुड़ाई के लिए 50–55 दिन में तैयार हो जाते हैं। औसत पैदावार ग्रीष्म ऋतु में 625 क्विंटल व खरीफ में 470 क्विंटल /हेक्टेयर है जो पूसा नवीन की तुलना में डेढ़ गुना है।

पूसा समृद्धि: फल आकर्षक हरे रंग के, चिकने, सीधे, थोड़े से गदाकार व बिना गर्दन के होते हैं। फल मध्यम आकार के लगभग 25–30 सें.मी. लम्बे तथा 6–5 से 7–5 सें.मी. मोटे होते हैं। फल का औसत वजन लगभग 1 कि. ग्रा. होता है। फलों की प्रथम तुड़ाई 50–55 दिनों में हो जाती है। खरीफ में औसतन 310 क्विं./हे. तथा तथा गर्मी में 275 क्विं./हे. पैदावार देती है इसकी व्यावसायिक खेती उत्तरी भारत में बंसत व गर्मी तथा खरीफ मौसमों में सफलता पूर्वक की जा सकती है।

पूसा संतुष्टि: फल आकर्षक हरे रंग के, चिकने, नाशपाती के आकार के होते है। फलों की लम्बाई औसतन 18–20 से.मी. तथा 10 से 12 से.मी. मोटे होते है। फल का औसत वजन लगभग 0.800–0.900 किलोग्रम होता है। पहली तुड़ाई 55–60 दिनों मे हो जाती है। खरीफ में औसतन 290 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा गर्मियों मे 260 क्विंटल प्रति

हेक्टेयर पैदावार देती है।

काशी बहारः फल हल्के हरे, सीधे 30–32 से. मी. लम्बे, औसत फल भार 780– 820 ग्राम, औसत उपज 520 कु. हेक्टेयर है। इसकी व्यावसायिक खेती उत्तरी भारत में बंसत व गर्मी तथा खरीफ मौसमों में सफलतापूर्वक की जा सकती है।

काशी गंगाः फल मध्यम लम्बे (30 से. मी.), औसत फल भार 800– 900 ग्राम, बंसत व गर्मी में फलों की पहली तुड़ाई 50 दिनों बाद व खरीफ मौसम में 55 दिनों के बाद की जा सकती है ।

सीताफलः

पूसा विश्वासः फल हल्के भूरे, गोलाकार, गूदा मोटा, सुनहरा पीला, वजन 5 कि. गा., 120 दिनों में परिपक्व, पैदावार 400 क्वि./हे.।

पूसा विकासः बेल अर्ध बौनी से बौनी, 2.0–2.5 मी. लंबी, फल छोटा, वजन 2 कि. ग्रा., चपटा–गोल, गूदा पीला, पैदावार 300 क्वि./हे.।

पूसा हाइब्रिड–1: फल चपटा गोल, मध्यम आकार, वजन 4.75 कि. गा., गूदा सुनहरा पीला, दोनों मौसमों में लगाने योग्य, पूसा विश्वास की तुलना में 25 प्रतिशत अधिक उपज। पैदावार 520 क्वि./हे. ।

काशी हरितः फल चपटा गोल, हरा, वजन 3.5 किः ग्राः, तथा एक पोधे से औसतन 4–5 फल प्राप्त किये जा सकते हैं यह कद्दू की सबसे अगेती प्रजाति है। फल की प्रथम तुड़ाई बुवाई के 50–60 दिनों के बाद शुरू हो जाती है। यह प्रजाति हरे फल की खेती के लिए उपयुक्त है। पैदावार 400 क्वि./हे.।

बेलदार सब्जियों के प्रमुख कीट व रोग एवं उनका प्रबंधनः

1 लाल कद्दू भृंगः इसके शिशु व वयस्क दोनों फसल को हानि पहुचाते है। वयस्क पौधों के पत्ते टेढे मेढे करके छेद करते है जबकि शिशु पौधों की जड़ों भूमिगत तने व भूमि से सटे फलों तथा तनों को नुकसान पहुचाते हैं।

प्रबंधनः

1 फसल खत्म होने पर बेलो को खेत से हटाकर नष्ट कर दें ।

2 सतंरी रगं के भृंग को सुबह के समय इकट्ठा करके नष्ट कर दें।

4 कार्बरिल 50 डब्ल्यृ. पी. 2 ग्राम/लीटर या इन्डोक्साकार्ब 14.5 एस. सी. 1 मि. ली. /2 लीटर का छिडक़ाव करें।

5 भूमिगत शिशुओं के लिए क्लारेपोयरीफॉस 20 ई. सी. का 2–5 लीटर/हे. सिचांई के साथ इस्तमेाल करे।

2 फल मक्खीः इस कीट की मक्खी फलों में अंडे देती है तथा शिशु अंडे से निकलने के तुरतं बाद फल के गूदे को भीतर ही भीतर खाकर सुरगें बना देते है।

प्रबंधनः

1 खेत की निराई करके प्युपा को नष्ट करे।

2 ग्रसित फलों को भी एकत्रित करके नष्ट करे।

3 मखियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो स्पाइनोसैड 45 एस.सी. 2–3 मि. ली./10 लीटर व 1 प्रतिशत चीनी/गुड (25 ग्राम/लीटर) से बनाया जा सकता है का 50 लीटर/हे. की दर से छिड़काव करें।

4 फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए ''मिथाइल युजिनोल'' पाश का प्रयोग भी किया जा सकता है।

3 सफेद मक्खीः इस कीट के शिशुओं व वयस्कों के रस चसूने से पत्ते पीले पड. जाते हैं। इनके मधुबिन्दु पर काली फफंदू आने से पौधों की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है।

प्रबंधनः

1 इस कीट की राकेथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. की 1 मि.ली./3 लीटर या डाइमथोाएट 30 ई.सी. की 2 मि.ली./लीटर का छिडक़ाव करें।

2 इल्लियों को इकट्ठा करके नष्ट करें।

3 कार्बरिल 50 डब्ल्यू. पी. 2 मि.ली./लीटर या स्पिनोसेड

45 एस. सी. 1 मि.ली./4 लीटर का छिडक़ाव करें।

4 चेंपा (एफिड): लगभग सभी बेलदार सब्जी फसलों पर आक्रमण करते हैं। ये पौधों के कोमल भागों से रस चूसकर फसल को हानि पहुचाते हैं।

प्रबंधनः

1 नाइट्रोजन खाद का अधिक प्रयोग न करे।

2 इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. 1 मि. ली. /3 लीटर या डाइमथेाएट 30 ई. सी. 2 मि. ली./लीटर या क्विनलफॉस 25 ई. सी. 2 मि. ली./लीटर का छिडक़ाव करें ।

बिमारियाः

1 चूर्णिल आसिताः पत्तियों की ऊपरी तथा निचली सतह पर सफेद धब्बे दिखाई देते हैं। पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा सूख जाती हैं व पोधे की वृद्वि रुक जाती है।

उपचारः 0.3 प्रतिशत केराथेन का साप्ताहिक छिड़काव करे।

2 मृदु रोमिल आसिताः पत्तियों के उपरी भाग पर पीले धब्बे तथा निचले भाग पर रुई के समान कवक जाल की वृदि ,वं बैंगनी रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

उपचारः इसके रोकथाम के लिए डाईथेन जेड–78 के 0.2 से 0.3 प्रतिशत (2–3 ग्रा. प्रति लीटर) का घोल बनाकर छिड़काव करें या रिडोमिल का 10–15 दिनों के अन्तराल पर 2–3 बार छिड़काव करें।

3 विषाणु रोगः मुख्य रूप से एफिड व सफेद मक्खियों द्वारा फैलता है। पत्तियों पर पीले धब्बे पड़ना, सिकुड़ना, पीली हो कर सूख जाना तथा फलों पर हल्की से लेकर मस्सेदार वृद्वि दिखाई देना, छोटे व टेड़े मेढे होना आदि प्रमुख लक्षणों में से हैं ।

उपचारः रोग के नियंत्रण के लिये 0.3 प्रतिशत मेटासिस्टो. क्स या 0–2 प्रतिशत रोगोंर का छिड़काव करें ।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. वर्ष 2015 से प्रसार दूत का अंक त्रैमासिक किया गया है। लेखकों से अनुरोध है कि प्रथम अंक के लिए प्रकाशनार्थ सामग्री 30 जनवरी, द्वितीय अंक 30 अप्रैल, तृतीय अंक 31 जुलाई तथा चतुर्थ अंक 31 अक्तूबर तक अवश्य भेज दें।
4. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

प्रथम अंक मार्च, द्वितीय अंक जून, तृतीय अंक सितम्बर और चतुर्थ अंक दिसम्बर में प्रकाशित होगा।

वार्षिक शुल्क 80/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25846233, 25841039, 25803600

पूसा एग्रीकॉम: 1800 11 8989 (नि:शुल्क)

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा

मैसर्स एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028, द्वारा मुद्रित

फोन: 7838075335, 9899355565, 9899355405,